TEXT FLY WITHIN
THE BOOK ONLY

UNIVERSAL LIBRARY

OU_180930

UNIVERSAL LIBRARY

H 81.6/R14Pr G.H.1749
रघुवीर शरण।
प्रेरणा।1946

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 891.6/R14Pr Accession No. G.H. 1749

Author रघुवीर शरण ।

Title प्रेरणा । 1946

This book should be returned on or before the date last marked below.

3 JUN 1968

प्रेरणा

रघुवीरशरण मित्र

प्रथमावृत्ति– स्वतन्त्रता दिवस
२६ जनवरी १९४६
प्रकाशक
अ० भा० राष्ट्रीय साहित्य
प्रकाशन परिषद
मेरठ

मुद्रक
मदन मोहन बी. ए.
निष्काम प्रेस, मेरठ।

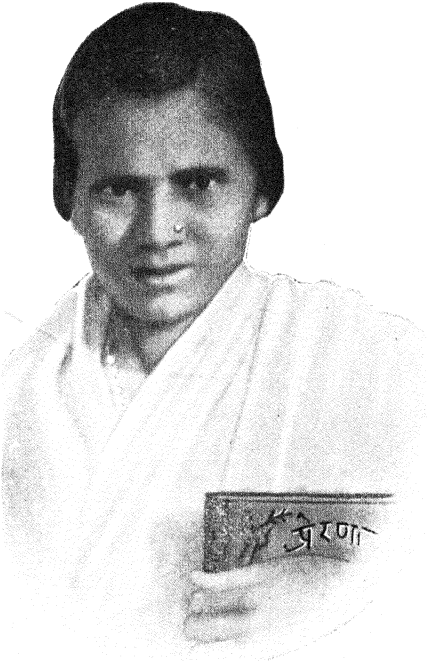

चाहिन उषा भारतीको

प्रेरणा

किसकी उपासना है यह ? कौन है वह ? छाया के पीछे क्यों दौड़ रहे हो ? प्रतिमा को पहिचानो, वह तुम्हारी शक्ति है, शान्ति है, कीर्ति है।

कहीं से उत्तर आया, छाया के पीछे कौन दौड़ रहा है अजात ! यही तो तुम तक पहुँचने की तपस्या है शरण्य ! आकर्षण में तुम्हारा ही तो प्रतिबिम्ब है देव !

कवि ने चारों ओर देखा, शून्य में सरस्वती के दर्शन हुए, क्षितिज में अक्षय ज्योति की झलक दिखाई दी, सूने शार्दूल पर कल्पना ने उड़ान ली, प्रश्नोत्तर टकराकर रह गये।

भावुकता बिखरने लगी, आँसुओं में लेखनी भीगी, कवि लिखने लगा।

मैं श्मशान में खड़ा था, बिखरी हुई हड्डियों ने शरीर का परिचय दिया, जलती हुई चिताओं के साथ भ्रम जलने लगा, मेरी आँखों के सामने मेरी चिता बन गई, मूक शिक्षा से सब कुछ सीख लिया।

दीक्षा लेकर प्रेम की भिक्षा माँगने चला, किसी ने अच्छा कहा, किसी ने बुरा, किसी ने गालियाँ दीं, किसी ने प्रेरणा, किन्तु प्रेम की भिक्षा कहीं भी न मिली।

प्राण छटपटाने लगे, खोया सा सुन्न रह गया, शून्य में कुछ ढूँढने लगा, थक कर सो पड़ा दिव्ये ! प्रतिध्वनि में कविता ने कहा, मैं तो तुम्हारे पास ही हूँ कवि ! तन को बाँधने से मन नहीं बँध सकता, बिना चाँद के कुमुदनी नहीं खिला करती, मूक प्रेम ही सत्य की परिभाषा है।

मैं फिर लिखने लगा—

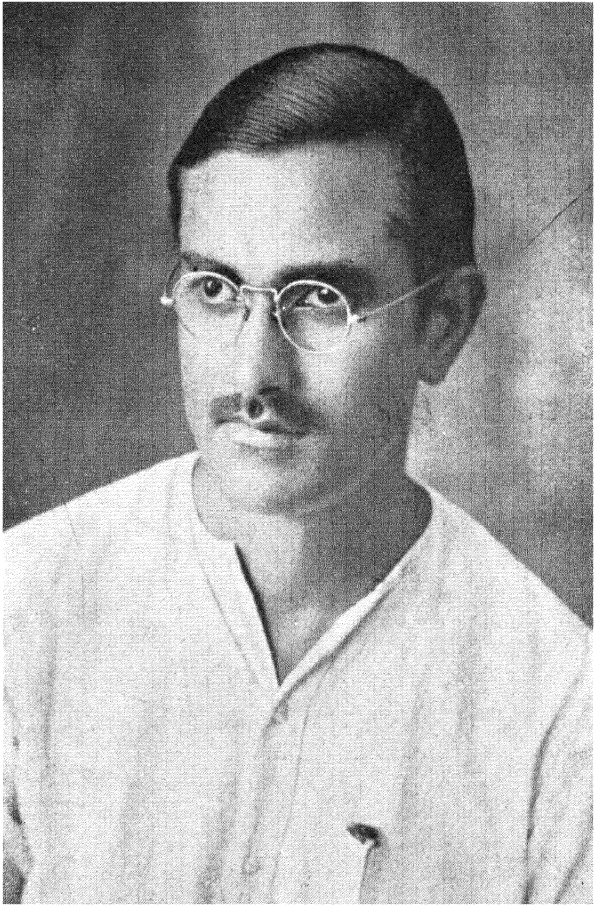

"मित्र"

शून्य में

क्रम

	रचना			पृष्ठ
१	अन्तर्वासी !	...	...	१
२	सान्त्वने !	...	...	३
३	प्राण !	...	...	६
४	आँखे	...	...	६
५	प्यास और पानी	...	...	१४
६	तस्वीर कैसी ?	...	...	१५
७	सो गई	...	...	१७
८	मेरी नौका !	...	...	२०
६	भाग्य	...	...	२२
१०	तुम	...	...	२५
११	तड़पन	...	...	२७
१२	जले पर नमक	...	...	२६
१३	एक रात	...	...	३१
१४	सावन में	...	...	३४
१५	प्रणयोत्तर	...	...	३५
१६	फूल मे पत्थर	...	...	३६
१७	उसकी तस्वीर	...	...	३७
१८	चिन्तित	...	...	३८
१६	तिरस्कार	...	...	४०
२०	पत्थर की चाह	...	...	४२
२१	मृत्यु-शैया पर	...	...	४३
२२	भगी	...	...	४४
२३	पतिता	...	...	४६
२४	निर्धन	...	...	४८
२४	क्रान्तिघोष	...	...	४६
२५	उस दिन	...	...	५१
२६	उस दिन	...	...	५२

रचना			पृष्ठ
२७ उस दिन	...	...	५४
२८ तुम किसकी हो ?	...	...	५५
२९ जा रही हो	...	...	५६
३० हमें रुलाया	...	...	५८
३१ भूल गईं	...	...	५९
३२ तुम मेरी हो	...	...	६०
३३ अधिकार	...	...	६१
३४ मृत्युञ्जय	...	...	६२
३५ रो पड़े	...	...	६३
३६ मौत न आती	...	...	६४
३७ मैं न बचूँगा	...	...	६५
३८ जल चुके	...	...	६७
३९ दो क्षण बाद	...	...	६८
४० अब	...	...	७०
४१ तब तक बरसो	...	...	७१
४२ कह न सका मैं	...	...	७२
४३ मना किया था	...	...	७३
४४ मुझे याद है	...	...	७४
४५ मुझे याद है	...	...	७५
४६ मुझे याद है	...	...	७६
४७ मुझे याद है	...	...	७७
४८ मुझे याद है	...	...	७८
४९ मुझे याद है	...	...	७९
५० मुझे याद है	...	...	८०
५१ शून्य	...	...	८१
५२ दहेज	...	...	८५
५३ लगन	...	...	८८

रचना			पृष्ठ
५४ अहिंसा	...	...	८६
५५ प्रणयनी	...	...	६१
५६ हत्या	...	...	६३
५७ वह मेरा है	...	...	१००
५८ मै उसका हूँ	...	...	१०२
५६ मेरे होते हुए	...	...	१०३
६० विश्वास	...	...	१०४
६१ तुम क्या जानो	...	...	१०५
६२ समाधि तक	...	...	१०६
६३ पाषाण	...	...	१०८
६४ मेरी नींद	...	...	१०६
६५ तेरी याद	...	...	११०
६६ चरणाश्रय	...	...	१११
६७ गीत न समझो	...	...	११२
६८ रुदन	...	...	११३
६६ लाचारी	...	...	११४
७० चोट	...	...	११५
७१ देवि !	...	...	११६
७२ दूर रहो	...	...	११७
७३ अस्पताल में	...	...	११८
७४ अस्पताल में	...	...	११६
७५ जग के डर से	...	...	१२०
७६ पहिचानो	...	...	१२१
७७ क्या कहती हो ?	...	...	१२२
७८ मानवता	...	...	१२३
७६ साहस	...	...	१२४
८० दिव्ये !	...	...	१२५

अन्तर्वासी !

[१]

चरण मिल जायें तुम्हारे ,
मै झुकी आँखें उठाऊँ ।
शरण मिल जाये तुम्हारी,
मै अनश्वर मुक्ति पाऊँ ॥

प्रेरणा

तुम हृदय में, पर तरसता,
देव ! मृग-मद के लिये मृग।
पादुकायें ढूंढते हैं,
पाप से नीचे गड़े दृग॥
मैं न आ सकता वहाँ तक,
चरण मस्तक तक बढ़ा दो।
झिड़कियों से झुक गया सर,
प्राण ! पैरों से उठा दो॥

बैठ चरणों में चरण-रज,
नाथ ! नत सर पर लगाऊँ।
चरण मिल जाये तुम्हारे,
मैं झुकी आँखें उठाऊँ॥

तार वीणा के गिरे छवि !
शून्य में कुछ गा रहा हूँ।
लाज से मुँह ढक कफन में,
पाँव छूने आ रहा हूँ॥
भूल सा भटका हुआ हूँ,
बन्द पिंजरे में पड़ा हूँ।
मैं प्रणय-पथ पर अकेला,
आज खोया सा खड़ा हूँ॥

मूक अन्तर-वेदना की,
आह मैं कैसे दिखाऊँ ?
चरण मिल जाये तुम्हारे,
मैं झुकी आँखें उठाऊँ॥

सान्त्वने !

[२]

तुम वाणी हो, तुम वीणा हो,
गाओ मधुर मधुर कुछ गाओ ।
श्वास श्वास में स्वर लहरी सी,
शुभे ! पुतलियों में बस जाओ ॥

प्रेरणा

तुम आँखों में आकर बैठो,
मुझे विश्व से क्या लेना है ?
मैंने हृदय दे दिया देवी !
और तुम्हें अब क्या देना है ?

तुम मेरे श्वासों की गति हो,
तुम मेरे प्राणों की ममता।
तुम मेरे सुख की सीमा हो,
तुम आलिङ्गन की तन्मयता ॥

ध्यान-तूलिका से हृद्-पट पर,
प्रतिपल छवि चित्रित करता हूँ।
सतत प्रेम से प्रेम सजा कर,
भावों में दृग-जल भरता हूँ ॥

छवि सी छम छम करती आओ,
आज मुझे मधु घोल पिला दो।
तुम कल्याणी, तुम इन्द्राणी,
मरे हुए को आज जिला दो ॥

रुनझुन रुनझुन छमछम छमछम,
आज करो हँस हँस अठखेली।
सुलझाता हूँ पर उलझन में,
उलझी रहती प्रेम-पहेली ॥

सान्त्वने !

मधुनिर्झरणी ! सुधा दिखाकर,
जीवन में विष घोल न देना।
चिन्ता, चिता, और दृग-जल ही,
शुभे ! स्नेह का मोल न देना ॥

प्यार और अधिकार छीन कर,
बना न देना कवि को अन्धा।
आँख मीच लूँ, आँख मींच कर,
तुम दे देना अपना कन्धा ॥

तुम प्रकाश हो, तुम माँझी हो,
मेरी नौका पार लगा दो।
सुख की परिभाषा समझाकर,
छवि ! सुख पर अधिकार दिखादो ॥

प्राण !

[३]

मैं वाणी हूँ, मैं वीणा हूँ,
बोलो अब कैसे गाओगे ?
हृदय, हृदय में, नयन, नयन में,
बोलो अब कैसे जाओगे ?

प्राण !

तुमने हरिणी घायल करदी,
देव ! दृगों के दो तीरों से।
मैंने तुमको बाँध लिया है,
प्राण ! स्नेह की जञ्जीरों से ॥

कैसे निकलोगे अन्तर से ?
कैसे निकलोगे आँखों से ?
मैं तितली सी उड़ी फिरूँगी,
बाँध तुम्हें अपने पाँखों से ॥

मैं वीणा के मधुर बोल सी—
स्वर-लहरी में लहराऊँगी,
मैं क्रीड़ा के खिले खेल सी—
सदा तुम्हारी कहलाऊँगी ॥

मनहर मुरली, और श्याम घन,
मैं अधरामृत पान करूँगी।
चरणों में आ चरणामृत पी,
क़िस्मत पर अभिमान करूँगी ॥

मेरा हाथ पकड़ कर स्वामी !
मुझे छिपालो अन्तराल में।
मुझे छुड़ालो हत्यारों से,
फँसी हुई हूँ विषम जाल में ॥

प्रेरणा

मै वह कलिका जो खिलने से –
पहिले ही मुरझाई प्रियतम !
मै वह, जिसके लिये विश्व में,
खोदी जाती खाई प्रियतम !

दो वरदान प्रेम से नाविक !
युग युग जिये प्रेम की जोड़ी ।
पार करो या नाथ ! डुबा दो,
मैने नाव भँवर में छोड़ी ॥

आँखें

[४]

नाच रहीं पुतलियाँ दृगों में,
या ये दो मधुकर मँडराये।
नीले रंजित नभ नलिनों पर,
या ये दो पक्षी उड़ आये॥

प्रेरणा

दो नदियो में दो नौकायें,
दो परियां सी तर रही हैं।
काली काली पर उजियाली,
ढूँढ प्रेम के पैर रही हैं॥

रिमझिम रिमझिम बरस रही है,
आँखो से कविता कल्याणी।
छम छम छम छम नाच रही है,
आँखों में सज्जित इन्द्राणी॥

गोल गोल मस्ती सी आँखें,
मधुर मधुर गति से गाती हैं।
सुधा भरी आँखे आँखो से,
अपने मन की कह जाती हैं॥

जब नयनो से नयन बोलते,
मन मे मृग दौड़ा करते हैं।
विश्व-शान्ति के मूक उपासक,
विश्व-व्याध से फिर डरते हैं॥

इन मृग से नयनो में सहसा—
भोले मन-मृग फँस जाते हैं।
इन नयनो से तीर निकलकर—
अन्तरतम में घुस जाते हैं॥

इनमें सुषमा, इनमें जीवन,
और प्रकृति इनमें इठलाती।
इनमें मन की मधुर कल्पना—
बैठी बैठी बीन बजाती॥

आँखें

चित में चंचलता भर देते,
मचल मचल कर चंचल लोचन।
चुपके चुपके प्यार लुटाकर,
कर देते प्रिय का अभिनन्दन ॥

* * *

अन्तर रोया, रोयी आँखें,
यह कैसी आँखों की लीला ?
अन्तर हँसा, हँस दिये लोचन,
मुँह हो जाता पीला पीला ॥

पर कैसे निर्मोही आँसू,
सुषमा-सागर से भी फिसले।
रुके न अन्तर की पीड़ा से,
आँखों के पथ से बह निकले ॥

विधि ने कैसा भाग्य दिया यह,
आँखों में भी रह न सके तुम।
रोका तुम्हें कपोलों ने पर—
चुम्बन को भी सह न सके तुम ॥

रोक न पाई मर मर कर भी—
तुम्हें कपोलों की कोमलता।
रोक न पाई तुम्हें वेदना,
और न नयनों की निर्मलता ॥

भाग्यहीन हो, या बहने में—
कुछ इनसे भी अधिक सार है।
बतलाओ वह कौन कि जिससे—
तुमको इनसे अधिक प्यार है ॥

प्रेरणा

पगलों ! आँखों में तो लाखों–
रहने को भटका करते हैं।
तुमसे निष्ठुर और कौन हैं–
जो आँखें झटका करते हैं॥

कैसे निर्मोही बन जाते,
गाल चूम कर चल देते हो।
निर्मम ! पीड़ा का सम्बल भी,
चलते चलते छल लेते हो॥

आँखे रोक न पाईं तुमको,
रोक न पाये गाल किसी के।
या आँखों से देख न सकते,
जलते भुनते हाल किसी के॥

इसी लिये अनजाने पथ पर,
टूक टूक हो चल देते हो।
मरते मरते हृदय थामते,
कैसे कह दूँ छल लेते हो?

आज मुझे मद भरे दृगों में–
दानवता का नाश चाहिये।
दीनो की आँखों के आँसू,
और खून की प्यास चाहिये॥

मंज़िल तक पहुँचाने वाला–
कृष्ण–सदृश संकेत चाहिये।
नङ्गे भूखे भारत के दृग,
हरा भरा यह खेत चाहिये॥

आँखें

जौहर की लपटों में जलती—
"पद्मिनियों" का प्यार चाहिये।
लाल लाल लोहू के आँसू,
'दुर्गे' का संहार चाहिये॥

आँखें दिखा रहे जो हमको,
आँखें उनकी आँख निकालें।
आँखों में वह आकर्षण हो,
आगे बढ़कर ताज उठालें॥

जिससे टूट गिरें हथकड़ियाँ,
अब ऐसी झनकार चाहिये।
अपना ही अधिकार चाहिये,
स्वतन्त्रता से प्यार चाहिये॥

प्यास और पानी

[५]

मैं प्यास और तुम पानी।
तुम हृदय-देश की रानी॥

तुम मीठी मीठी नींद, और मैं, मूक हूक की पीड़ा।
तुम थपकी लोरी प्राण, और मैं, अश्रु-अङ्क की क्रीड़ा॥
तुम मधुर मधुर गुदगुदी, और मैं, मन मसोस रह जाता।
तुम व्रीड़ा क्रीडा सुधा, और मैं, आँखों से बह जाता॥

तुम सुन्दर सरस कहानी।
मैं प्यास और तुम पानी॥

तुम श्वास श्वास में याद, और मैं, मधुर हँसी में रोड़ा।
तुम रवि, शशि, मङ्गल-ज्योति, और मैं, राहु केतु का जोड़ा॥
तुम यौवन में बहती सरिता, मैं, तट पर खड़ा पिपासा।
तुम प्यार, सुधा भंडार, और मैं, एक बूँद की आशा॥

तुम मन की मूक कहानी।
मैं प्यास और तुम पानी॥

तस्वीर कैसी ?

[६]

पास ही है, पर न मेरे पास, यह तस्वीर कैसी ?
हाय ! यह तक़दीर कैसी ?
चाँदनी है, चाँद भी है, किन्तु काली रात भी है।
सिल रहे हैं ओठ दोनों, किन्तु मुँह में बात भी है॥
चूमने का चाव है, पर, कालिमा का भाव भी है।
सामने संजीवनी है, पर, हृदय में घाव भी है॥
प्रेम है, पर पीर कैसी ?
पास ही है, पर न मेरे पास, यह तस्वीर कैसी ?
हाय ! यह तक़दीर कैसी ??

प्रेरणा

मैं हृदय पर राज्य करता, किन्तु मैं गूँगा भिखारी।
बोलना कुछ चाहती, पर, मौन है वाणी बिचारी॥
सामने है, पर विरह से, जल रही मेरी सरसता।
मै खड़ा सरिता किनारे, किन्तु जल-कण को तरसता॥
बीच में ज़ञ्जीर कैसी?
पास ही है, पर न मेरे पास, यह तस्वीर कैसी?
हाय! यह तक़दीर कैसी??

चाहता हूँ प्यार करलूँ, प्यार का अधिकार भी है।
हाथ में है हाथ लेकिन, बीच में दीवार भी है॥
चुटकियाँ चलतीं हृदय में, सामने संसार भी है।
मिल गये, फिर भी अलग हैं, जीत है, पर हार भी है॥
दवा है, पर तीर जैसी।
पास ही है, पर न मेरे पास, यह तस्वीर कैसी?
हाय! यह तक़दीर कैसी??

सो गई

[७]

संकल लगा सो गई रानी, स्वप्न सजाता चला गया मैं ।
जले हृदय पर निज नयनों से, खार बहाता चला गया मैं ॥

बोला, बन्द द्वार से कोई—
यहीं खड़ी वह रोई होगी।
सोई मेरी रानी सोई,
रोते रोते सोई होगी ॥
तुम मत कहना, 'वे आये थे',
मैं चुपके चुपके जाता हूँ।
तुम धीरे धीरे थपकी दो,
लो मैं अब लोरी गाता हूँ ॥

'आजा निंदिया, रानी सोई', गाता गाता चला गया मैं।
संकल लगा सो गई रानी, स्वप्न सजाता चला गया मैं ॥

प्रेरणा

शून्य सृष्टि थी साथ, साथ थी–
याद और धड़कन अन्तर की।
बैठा सा मन बिलख रहा था,
राह खुली थी शून्य डगर की॥
कितनी चट्टानें थीं जिनको–
चीर चीर कर चला गया मैं।
कितनो की आँखें थीं जिनमें–
झपकी भर भर चला गया मैं॥

दीप जलाने आया था पर, हृदय जलाता चला गया मैं।
संकल लगा सो गई रानी, स्वप्न सजाता चला गया मैं॥

चोर मिले, चौकीदारो ने–
मुझे चोर ही समझा होगा।
मेरा दुःख चाँद ने देखा,
या चकोर ही समझा होगा॥
मुझे तड़पता देख, साथ रो,
मुझसे रजनी रानी बोली।
'क्यों रोते हो पुरुष! प्रकृति ने–
देखो स्वागत में छवि खोली॥'

प्यार सजा कर लाया था पर, अश्रु बहाता चला गया मैं।
सकल लगा सो गई रानी, स्वप्न सजाता चला गया मैं॥

सो गई

कैसे गाऊँ ? गला रुँध गया,
हाय ! थक गया गाते गाते ।
मिल जातीं यदि दो क्षण को तुम,
तो मेरे आँसू पुछ जाते ॥
किन्तु भाग्य में शून्य लिखा है,
फिर तुम कैसे प्यार पिलातीं ।
मेरे दीप बुझाये जग ने,
तुम ही कैसे दीप जलातीं ॥

इसी लिए तो शून्य सृष्टि में, शब्द उड़ाता चला गया मैं ।
संकल लगा सो गई रानी, स्वप्न सजाता चला गया मैं ॥

मेरी नौका ?

[८]

मेरी नौका ? मैं डूब रहा, मल्लाह कहाँ ? पतवार कहाँ ?
मैं खड़ा अकेला उस पथ पर, तूफ़ान जहाँ अङ्गार जहाँ ॥

अन्तर में हो, बाहर भी आ,
दो चरणों का आधार मुझे।
दो आँखों में इतना पानी,
जिससे अन्तर की आग बुझे ॥
मेरी समाधि पर दुनिया की–
ठोकरें फूल बन जायेंगी।
मेरी समाधि पर दुनिया की–
जलती आँखें भर आयेंगी ॥

पर आज डूबते को जग में, तिनके तक का आधार कहाँ ?
मेरी नौका ? मैं डूब रहा, मल्लाह कहाँ ? पतवार कहाँ ?

मेरी नौका ?

दुनिया में चहल पहल लेकिन—
कवि को सूना संसार मिला।
जो मिलते ही जल गया हाय!
कवि को केवल वह प्यार मिला॥
छिप गये रात भर रो रो कर,
रवि के वियोग में दृग-तारे।
रवि जला विरह में तारों के,
पर जले न अब तक अङ्गारे॥

दिनकर शशि बिना जला करता, शशि कहता 'रवि का प्यार कहाँ?'
मेरी नौका? मै डूब रहा, मल्लाह कहाँ? पतवार कहाँ??

भाग्य

[१]

विधि ने इस फूटी क़िस्मत में, तरसानेवाला प्यार लिखा।

विधि ने मन देकर जलने का, इस क़िस्मत में व्यापार लिखा ॥

मुझ भिखमङ्गे की झोली में,
आँखों ने आँसू बरसाये।
मुझ भोले भाले भावुक ने,
पग पग पर दुतकारे खाये ॥
मैं तृषित भटकता रहा किन्तु-
मुझको न एक भी मिली घूंट।
आँखों ने आँसू दिये किन्तु-
जग की आँखें ले गईं लूट ॥

विधि ने इस फूटी क़िस्मत में, दुनिया का अत्याचार लिखा।
विधि ने इस फूटी क़िस्मत में, तरसानेवाला प्यार लिखा ॥

भाग्य

मुझको दुनिया ने दुलराया,
पुचकारा किसी भिखारिन ने।
मेरी चोटें चुपके चुपके,
सेकी उस प्रेम-पुजारिन ने॥
जिस रोज़ मरा उस रोज़ कफन,
उस भिखमंगी का चिथड़ा था।
आधा तन उसका ढका और-
आधा शव मेरा उघड़ा था॥

जो बुझा न आँखो के जल से, क़िस्मत में वह अङ्गार लिखा।
विधि ने इस फूटी क़िस्मत में, तरसानेवाला प्यार लिखा॥

मेरी दिनचर्या यही शेष-
कर याद उसे रो लेता हूँ।
स्वप्नो मे उसे सजाता हूँ,
उन स्वप्नो में सो लेता हूँ॥
वह भूल गई अपना कह कर,
मै अपनी कह कैसे भूलूँ?
आँखो से जीवन बह जाता,
जीवन में फिर कैसे फूलूँ?

विधि ने इस फूटी किस्मत में, छिन जाने वाला प्यार लिखा।
विधि ने इस फूटी क़िस्मत में, तरसानेवाला प्यार लिखा॥

प्रेरणा

मैं चित्र उसी के बना रहा,
मेरा अक्षर अक्षर देखो।
वह स्वर लहरी में लहर रही,
लहरानेवाला स्वर देखो॥
मै ढूंढ रहा हूँ जिसे, उसे--
तुम मेरी आँखो में देखो।
खो गई कहीं मेरी रानी,
मुझको सारी दुनिया से खो॥

जो मालिक होकर छू न सके, क़िस्मत में वह अधिकार लिखा।
विधि ने इस फूटी क़िस्मत में, तरसानेवाला प्यार लिखा॥

तुम

[१०]

तुम मेरी दिनचर्या बनकर, मुझे मुक्ति का द्वार दिखादो।
साथ साथ छाया सी रहकर, सुधे ! सत्य सङ्गीत सिखादो ॥

तुम मेरी भावुकता बनकर–
धड़कन में धक धक बन जाओ।
अन्तर तम के अन्धकार में–
दीप जलाओ, दीपक ! गाओ ॥
तुम मेरे स्वप्नो में आओ,
तुम अन्तर की गाँठे खोलो।
तुम सितार हो, स्वर लहरी में–
बोलो बोलो वाणी ! बोलो ॥

कौतुक सी उँगलियाँ चलाकर, मेरे टूटे तार बजादो।
तुम मेरी दिनचर्या बनकर, मुझे मुक्ति का द्वार दिखादो ॥

प्रेरणा

तुम भिक्षुक की भिक्षा बनकर,
उसे बचालो दुतकारों से।
तुम शव की कफनी बन जाओ,
लाश जलादो अङ्गारों से॥
नौका बनकर, नाविक बनकर,
बन पतवार पार करदो तुम।
सत्वर गीत अनश्वर गादो,
स्वर सुर में अनादि भरदो तुम॥

आकर्षण की शुभ्र ज्योत्सने! खार जलाकर प्यार पिलादो।
तुम मेरी दिनचर्या बनकर, मुझे मुक्ति का द्वार दिखादो॥

तड़पन

[११]

अभी और कब तक रोना है, मुझे मौत किस दिन आयेगी।
जाने किस दिन कवि की कविता, कवि के लिये कफ़न लायेगी॥

प्रेरणा

रोते रोते नयन थक गये,
सूख गया आँखो का पानी।
कहते कहते ओठ थक गये,
आगे कैसे कहूँ कहानी ?
टूटे तार, जल रही छाती,
लेकिन धड़कन बन्द न होती।
पथरा गईं, फट गई आँखें,
बरस रहे ज़हरीले मोती॥

जाने मुझे और कितने दिन, दुनिया चूँट चूँट खायेगी।
अभी और कब तक रोना है, मुझे मौत किस दिन आयेगी॥

मुझे जलाओ जिस दिन, उस दिन-
ये कविताएँ साथ जलाना।
मेरी राख बहाओ जिस दिन-
उस दिन एक गीत यह गाना॥
जीवन भर जलता जलता कवि-
तड़प तड़प रो रो गाता है।
प्रेम किसी से कर वियोग के-
अङ्गारों में जल जाता है॥

कवि की लाश जलेगी लेकिन, याद तडप कर रह जायेगी।
अभी और कब तक रोना है, मुझे मौत किस दिन आयेगी॥

जले पर नमक

[१२]

शुभे ! 'जले पर नमक छिड़कने' आ न सकेगा कोई कल से।
मैं मरघट में जला करूँगा, बच जाओगी तुम कल-कल से॥

प्रेरणा

मेरा प्यार नमक बतलाकर–
क्यों जीवित की चिता जलादी ?
'अच्छा, मत आना' यह कहकर–
क्यों अन्तर में आग लगादी ?
खेल तुम्हारे लिये हो गया–
दुतकारों से स्वागत करना।
प्यार हमारे लिये हो गया–
चुपके चुपके आँखे भरना ॥

धो डालूँगा आज कालिमा, और नमक आँखों के जल से।
शुभे ! 'जले पर नमक छिडकने' आ न सकेगा कोई कल से ॥

मेरे मन–मन्दिर की प्रतिमे !
मेरा हृदय चीर कर देखो।
'तुम क्या हो ?' मुझ से मत पूछो,
यह तस्वीर तीर पर देखो ॥
जहाँ दृगों से सरिता बहती,
और विश्व से ऊब रहा मैं।
जहाँ किनारे पर क्रीड़ा है,
हिचकी ले ले डूब रहा मैं ॥

जहाँ किसी की लाश जल रही, आग और आँखों के जल से।
शुभे ! 'जले पर नमक छिड़कने' आ न सकेगा कोई कल से ॥

एक रात

[१३]

मेरे जीवन की एक रात,
जिसमें तम है, जिसमें प्रभात,
जिसमें जीवन के सुख दुख हैं,
जिसमें अन्तर्हित पाप पुण्य,
पहली रजनी का प्रथम प्यार।

प्रेरणा

निस्तब्ध निशा में वृक्ष मौन,
फूलों पत्तों में आलिंगन,
चाँदनी रात थी जले दीप,
मन में वासना मचलती थी,
करवट बदलूँ था बार बार।

तब कोई दुलहन से बोली—
रख आ कपड़े मैं यहीं खड़ी,
बिछुवो की रुनझुन सी छमछम—
सुनते ही अन्दर चली गई,
कर दिये किसी ने बन्द द्वार।

वह सहम खड़ी हो गई वहीं,
चित्रित सी छवि थी छली हुई,
उभरा था यौवन-रस-पराग,
लज्जा से सस्मित फूल झुके,
झिलमिल करता था स्वर्ण हार।

मैंने घूँघट में मुँह देखा,
मानो सीपी में मोती थे,
मानो बादल में चाँद छिपा,
या हरिणी के दो नयनों पर—
यौवन दौड़ा होकर सवार।

कोमल किसलय में कलिका थी,
सकुचाती थी, बल खाती थी,
मैं देख रहा था निर्निमेष,
उस रात किसी आशा विशेष,
मन में थे कितने ही विचार।

एक रात

कलिका पर रवि-रश्मियाँ पड़ीं,
छूते ही बिजली सी दौड़ी,
करवट बदली ली अँगड़ाई,
घूँघट में चमके नयन तभी,
मन को आँखों ने दिया प्यार।

अम्बर ने छवि-घूँघट खींचा,
सिमटी कलिका, बोली, यह क्या ?
चौंकी, डर कर हट गई परे,
पर सहसा घन—पट खिसक गया,
सिमटी सुन्दरता बार बार।

वह इठलाती थी इधर उधर,
मधुकर अकुलाता और अधिक,
मारा मनोज ने खींच तीर,
खिंच गया सुमन से लता चीर,
भुज पासों में बँध गया प्यार।

आलिंगन के बन्धन जकड़े,
प्रातः रवि-किरणें क्या लाईं ?
लाईं जग के गोरखधन्धे,
जाने वह जीवन कहाँ गया,
बजता टूटा अन्तर—सितार।

सावन में

[१४]

आज सहेली ! झूला झूलूँ,
आया सावन मास।
पड़ती हैं तिरछी बौछारें,
मेरे घर के पास॥

हँस हँस बदली झूम रही है,
करती सुन्दर हास,
मस्ती आज पवन में आली !
प्रियतम मेरे पास॥

चन्दन की पटरी पर बैठूँ,
लेकर प्रेम-सितार।
झोंटे ही झोंटों में गूथूँ,
आलिङ्गन के हार॥

प्रियतम बैठे हों पटरी पर,
देखें मेरी ओर।
तब मेरी आँखों में चमकें,
नाचें चाँद चकोर॥

प्रणयोत्तर

[१५]

प्रिय !

मैं एक मोम की बत्ती हूँ,
जल कर घुल कर बह जाती हूँ।
मैं दीप-शिखा हूँ जल जल कर–
तुमको दिन रात जलाती हूँ॥

प्रिये !

तुम एक मोम की बत्ती हो,
मेरी लो से जल जाती हो।
तुम दीपशिखा हो जल जल कर–
उर में प्रकाश बरसाती हो॥

प्रिय !

प्रिय ! मैं पिँजरे की मैना हूँ,
पिँजरे में नीर बहाती हूँ।
मन रोता है, मुख हँसता है,
मैं रोती हँसती गाती हूँ॥

प्रिये !

मैं भी पिँजरे का तोता हूँ,
मैना पिँजरे में गाती है।
दोनो के पिँजरे दूर दूर,
दोनों की याद सताती है॥

फूल से पत्थर

[१६]

कल तक जो फूल समझते थे,
वे पत्थर आज बताते हैं।
कल तक जो सुधा छिड़कते थे,
वे ज़हर आज बरसाते हैं॥

पहिले तो प्यार भरी बातें,
अब तीखे तीर चलाते हैं।
दे दिया हृदय जिनको मैंने,
वे झिड़की आज सुनाते हैं॥

इसमें कुछ जग का दोष नहीं,
सब सुख के, दुख में कौन हुआ?
सुख में सारा संसार सगा,
दुख में सारा जग मौन हुआ॥

उसकी तस्वीर

[१७]

उसकी तस्वीर खींचता हूँ,
जिसके दर्शन को तरस रहा।
जिसके वियोग की ज्वाला में—
जल जल गङ्गा जल बरस रहा॥

पग पग पर दुतकारे खा खा—
जिसके घर जाया करता था।
जिसके हाथों से निज करमें—
राखी बँधवाया करता था॥

दे दिया जिसे अपना सब कुछ,
दे दिया जिसे हृद्राज, ताज।
पर लाज बेचकर जूझ रहा,
भावुक कवि से नंगा समाज॥

मेरा सुख उन दोनों का सुख,
वे दोनों प्राणी सुखी रहें।
वे हँसते खिलते रहें सदा,
चाहे हम दोनों दुखी रहें॥

विक्षिप्त

[१८]

रोते भी आती मुझे लाज,
मैं अस्त व्यस्त विक्षिप्त आज।
मैं भटक रहा हूँ एकाकी,
मेरा क्या दुनिया में बाकी॥

विक्षिप्त

हो गई दूर मुझ से रानी,
आँखों में छोड़ गई पानी।
मैं इधर उधर छिप छिप रोता,
क़िस्मत से यदि पागल होता—

सारे जग में रोता चलता,
अपनी धुन में हँसता, जलता।
दुनिया कवि को पागल कहती,
पर उससे दूर दूर रहती॥

मैं बेसुध कुछ गाता जाता,
रोता हँसता फिर चिल्लाता।
बालक पीछे पीछे आते,
पागल! पागल! कह चिल्लाते॥

यह मेरी दिनचर्या होती,
कोई हँसती, कोई रोती।
कोई मेरे पीछे आती,
कोई कवि को घर ले जाती॥

तिरस्कार

[१९]

बैठी देख रही हो भगनी!
कौन कौन दुतकार रहे हैं।
मेरे आँसू ही अब मुझको—
बह बह कर पुचकार रहे हैं॥

तिरस्कार

खड़ा खड़ा दर पर रोता हूँ,
बैठ रहा मेरा अन्तस्तल।
एक हड्डियों का ढाँचा है,
आँखों से बहता रह रह जल ॥

अपनी भगनी के आँचल में–
आँसू बरसाने आया हूँ।
उसकी गोदी में सर रख कर–
अन्तर समझाने आया हूँ ॥

जब जब भी आँसू आते थे,
तब तब तुमने ही पुचकारा।
अब क्यों नहीं बोलती उससे ?
रोता भैया बहिन ! तुम्हारा ॥

रूठ गईं तुम, रूठ गये सब,
साथ रह गई याद तुम्हारी।
राखी बाँध भर दिये निर्मम,
आँखों में दो आँसू खारी ॥

पत्थर की चाह

[२०]

पत्थर की सुन, ओ शिल्पकार !
यह मेरा नम्र निवेदन है,
अर्पित जिसको तन मन धन है,
जो प्रेम भरी, जो जीवन है,
जो निर्मल, जो कमलानन है,

उस पथ में लगवा दे मुझको,
उसकी ठोकर का करूँ प्यार।
पत्थर की सुन, ओ शिल्पकार !

उस प्रीति-हार में जड़ सत्वर,
मोहित वह हो जाये जिस पर,
चित्रित कर उस पर कमल नयन,
वह फूल समझ कर करे चयन,

फिर हार पहिन कर इटलाये,
मुँह चमके उसमें बार बार।
पत्थर की सुन, ओ शिल्पकार !

मृत्यु-शैया पर

[२१]

जग की ज्वाला में जलता, अधिकार लिये जाता हूँ ।
मैं साथ किसी देवी का, सत्कार लिये जाता हूँ ॥

दुनिया में शेष रहेगी,
यह कवि की एक कहानी ।
मर गया तड़प कर लेकिन—
हँसती ही रही जवानी ॥
मरने से पहिले मुझको—
जी भर कर रो लेने दो ।
जो कफन लाश पर डालो,
आँखों से धो लेने दो ॥

मैं साथ साथ जीवन की, बस हार लिये जाता हूँ ।
जग की ज्वाला में जलता, अधिकार लिये जाता हूँ ॥

अर्थी ले जाने वालो !
तुम मेरी चिता बनाना ।
लेकिन न भूल कर भी तुम—
वह जलती चिता जलाना ॥
अन्तर से आग लगेगी,
तुम राख उठा ले जाना ।
उस निर्मम के दर पर फिर—
भस्मी का ढेर लगाना ॥

वह ढेर कहेगा उससे, मैं चरण चूम गाता हूँ ।
जग की ज्वाला में जलता, अधिकार लिये जाता हूँ ॥

भंगी

[२२]

पग पग पर दुतकारे खाता ।

'हट हट भङ्गी है' जग कहता,
दुनिया के चिलकारे सहता,
बच जाना बाबू जी ! कहता,
सर पर मल का धरे टोकरा–

लिये हाथ में झाड़ू आता ।
पग पग पर दुतकारे खाता ॥

भंगी

घर सड़कों पर झाड़ू देता,
झूठे कूटे टुकड़े लेता,
गाड़ी भरी दुआएँ देता,
"बने रहें बालक बाबू जी !"

पथ पथ पर वह कहता आता।
पग पग पर दुतकारे खाता ॥

भङ्गी ! अत्याचार न सह तू,
अपनी हारी हार न कह तू,
आँसू बनकर व्यर्थ न बह तू,
ढो ढो कर मल एक मास तक—

क्यों केवल कुछ आने लाता ?
पग पग पर दुतकारे खाता ॥

पतिता

[२३]

सौरभ खोया इस जग मग में ।
जो इसकी तरफ देखते हैं, वे ठुकराये जाते जग से ।

पैसों टुकड़ों पर बिकती है,
वासना तृप्ति कर सिकती है,
कृत्रिम सौन्दर्य किया धारण,
केवल दो टुकड़ों के कारण–

दे देती अपना यौवन–धन, पर ठुकराई जाती पग से ।
सौरभ खोया इस जग मग से ॥

पतिता

ललचा कर देखे मुख मुख पर,
नयनों से बुला रही कह कर,
नर दृष्टि डालता इधर उधर,
फिर छिप छिप चढ़ जाता ऊपर,

लोगों की आँखे बचा बचा, जाता लम्बे लम्बे डग से।
सौरभ खोया इस जग मग से ॥

इस छवि पर भी यौवन आता,
पर हाय ! अभागिन को खाता,
क्यों मधु, सुगन्ध-रस चूस चूस—
चल दिये मिला कर आग फूस,

इनका सुधार कर अरे हूस ! क्यों ठुकराता इनको पग से।
सौरभ खोया इस जग मग से ॥

निर्धन

[२४]

उसका तन, मन, धन जला, और जग खेला।
सूने पथ पर वह देखो कौन अकेला ?

किसने निर्धन की दीन दशा पहिचानी।
किसने उसकी आँखों का पूछा पानी॥
काटा करता जैसे जीवन कटता है।
मन रोता पर भोला सा मुख हँसता है॥

उसका कैसा त्यौहार ? और क्या मेला ?
उसका तन, मन, धन जला और जग खेला॥

धन से कवि कविता ताज पहिन लेते हैं।
यदि धन न हुआ तो सब धक्के देते हैं॥
निर्धन को उसके सगे न पास बिठाते।
सब मानवता ठुकराते, आते जाते॥

उसकी खाली है जेब नहीं है धेला।
उसका तन, मन, धन जला और जग खेला॥

क्रान्ति-घोष

[२४]

आज क्रान्ति की शान्ति भाँति है, जली आग, जग जलता।
राक्ति भक्ति साहस रग रग में, रह रह रक्त उबलता॥

परिवर्त्तन के गीत गा रहीं—
हथकड़ियाँ घर घर में।
धधक रहे अंगार हृदय में,
उथल पुथल नर नर में॥

श्वास श्वास में सिसक सिसक कर—
आहें आँखे धोतीं।
कितने बन्धन, कितनी बहिनें—
नंगी भूखी रोतीं॥

राज चाहिये, ताज चाहिये, भारत की उज्ज्वलता।
आज क्रान्ति की शान्ति भाँति है, जली आग, जग जलता॥

प्रेरणा

कितने जले, जल रहीं कितनी,
कितने नयन बरसते।
कितने प्राण पड़े पिँजरों में,
कितने पेट तरसते॥

कितने वीर 'यतीन्द्र नाथ' से,
कारागृह ने खाये।
कितने प्राणों ने पिँजरों में,
प्राण-प्रसून चढ़ाये॥

उन्हीं चिताओं के शोलों से, यह रण-घोष निकलता।
आज क्रान्ति की शान्ति भ्रान्ति है, जली आग जग जलता॥

मेरे साथ साथ वह आये,
जो न मौत से डरता।
वह आये जो क़दम बढ़ाकर-
क़दम न पीछे धरता॥

मेरे पथ में दहक रही है-
हत्यारों की ज्वाला।
मेरे पथ में तना खड़ा है-
अजगर खूनी भाला॥

धधक रही है अग्नि, किन्तु मैं, प्यार छिड़कता चलता।
आज क्रान्ति की शान्ति भ्रान्ति है, जली आग, जग जलता॥

उस दिन

[२५]

उस दिन कवि को पहिचानोगे, जिस दिन उसकी लाश चलेगी।
उस दिन कवि को जान सकोगे, जिस दिन उसकी चिता जलेगी॥

इतने सब मिल उसे सतालो,
फिर यह समय नहीं आयेगा।
जाने फिर वह कहाँ रहेगा?
जाने कहाँ चला जायेगा?

जग की अच्छी बुरी गालियाँ,
मेरे साथ नहीं जायेंगी।
फिर ये अच्छी बुरी तुम्हारी,
रह रह याद तुम्हें आयेंगी॥

जो कवि को दिन रात कोसते, कब तक उनकी बात फलेगी?
उस दिन कवि को पहिचानोगे, जिस दिन उसकी लाश चलेगी॥

उस दिन

[२६]

उस दिन शून्य डगर में रानी! तुमने मुझे कहा था 'राजा'।
उस दिन सब कुछ न्योछावर कर, गाया 'मेरे राजा! आजा'॥

अब उस पथ पर आते जाते—
मेरी आँखें भर आती हैं।
अब जब वहाँ ढूढ़ता तुमको,
ईंटें आगे आ जाती हैं॥

आ जाती है याद उसी क्षण—
बैठ गईं थी तुम ईंटों पर।
और कहा था बड़े प्यार से,
'प्रिय! गोदी में बैठो आकर'॥

मैंने कहा कहो फिर पहिले, 'आजा मेरे राजा आजा'।
उस दिन शून्य डगर में रानी! तुमने मुझे कहा था 'राजा'॥

उस दिन

नभ के नीचे पृथ्वी-तल पर—
उस दिन हम तुम साथ खड़े थे।
तुमने कहा "भूल मत जाना",
मेरे आँसू निकल पड़े थे॥

तुम रोयीं, मैं रोया रानी!
शपथ उठाकर एक हो गये।
अब ईंटों से पूछा करता—
कहो कहाँ वे स्वप्न सो गये॥

वे कह देतीं 'चिता जल गई', मैं कहता, 'आ रानी! आजा'।
उस दिन शून्य डगर में रानी! तुमने मुझे कहा था 'राजा'॥

अब उस पथ पर आ जाता है—
चित्र वही आँखों के आगे।
अब पथ की चट्टानें रानी!
कह देतीं जल जा हतभागे!

अपनी आँखों के पानी में,
कब तक हमें बहायेगा तू।
अपने हृदय के अंगारों से,
कब तक हमें जलायेगा तू॥

पर मैं सुनता नहीं किसी की, कहता रहता 'रानी आजा'।
उस दिन शून्य डगर में रानी! तुमने मुझे कहा था 'राजा'॥

उस दिन

[२७]

उस दिन दर्वाज़े में तुमने, मुझ से दो बातें करलीं थीं ।
उस दिन आज सोच कर हमने, रो रो कर बाँहें भरलीं थीं ॥

जीने की पहली सीढ़ी पर,
कम्पित अधर धरे अधरों पर ।
बँधे स्नेह की जञ्जीरों में,
प्यार कर रहे थे रह रहकर ।

एक हो गये थे हम दोनों,
आलिंगन कर शुद्ध हृदय से ।
आज तुम्हारा मोल कर रहा,
अक्षय जीवन के विक्रय से ॥

उस दिन अर्धरात्रि में हमने, छिप छिप कर बाँहें भरलीं थीं ।
उस दिन दर्वाज़े में तुमने, मुझ से दो बातें करलीं थीं ॥

तुम किसकी हो ?

[२८]

मैंने पूछा 'तुम किसकी हो', तुमने कहा 'तुम्हारी प्रियतम !'
सुन सितार के सुर से स्वर छवि ! नाच उठा करता था छम छम ॥

कितने मूक प्रश्न करते थे,
चुपके चुपके, नयन बचाकर ।
मैंने अधर हिलाकर पूछा,
तुम उँगली से देतीं उत्तर ॥

कितनी बार प्यार करते थे,
दूर दूर ही बैठे रानी !
कितनी बार पूछ देते थे,
आँखों से आँखों का पानी ॥

बोलो शुभे ! कहाँ हो अब तुम, कहाँ गई वह मेरी छम छम ?
मैंने पूछा 'तुम किसकी हो', तुमने कहा 'तुम्हारी प्रियतम' !

जा रही हो ?

[२९]

आज देख लूँ तुमको जा भर, कल तुम छोड़ चली जाओगी।
जिस क्षण भी आओगी उस क्षण, मुझे तड़पता ही पाओगी ॥

जा रही हो ?

चाहे जितने यत्न करूँ पर–
बिना तुम्हारे रह न सकूँगा।
श्वास श्वास में रोऊँगा पर–
रुदन किसी से कह न सकूँगा ॥

मूक वेदना से थक थक कर–
मेरी हृद्गति रुक जायेगी।
प्राण! तुम्हारे बिना सिसककर–
सुख की गति यति फुक जायेगी॥

उस दिन मेरी लाश मिलेगी, जिस दिन तुम वापिस आओगी।
आज देखलूँ तुमको जी भर, कल तुम छोड़ चली जाओगी ॥

दया करो जाने से पहिले–
देवी! मेरी चिता जलादो।
सुधे! एक क्षण को रुक जाओ,
रुक कर थोड़ा ज़हर पिलादो ॥

किन्तु ज़हर भी सुधा बनेगा,
शुभे! तुम्हारे शुभ हाथों में।
हाथों से मधु छीन बहाया–
काँटों ने चुभ चुभ हाथों में ॥

लाश जलेगी, प्यास रहेगी, आश रहेगी, तुम आओगी।
आज देखलूँ तुमको, जी भर, कल तुम छोड़ चली जाओगी ॥

हमें रुलाया

[३०]

तुम तो फूली नहीं समाईं, उस दिन जब मैं घर पर आया।
पर जितने भी और वहाँ थे, सब ने मिलकर हमें रुलाया॥

अभी कहाँ गालियाँ सुनी हैं,
अभी कहाँ दुतकारे खाये।
अभी मुहूर्तों तक रोना है,
अभी कहाँ दृग भर भर आये॥

अभी उषा ने चाँद डसा है,
अभी युगों तक 'मित्र' जलेगा।
चाहे हम दोनों मर जायें,
जग का हृदय नहीं पिँघलेगा॥

इसकी गाली, उसकी चर्चा, यही प्यार के बदले पाया।
तुम तो फूली नहीं समाईं, उस दिन जब मैं घर पर आया॥

भूल गईं

[३१]

क्या तुम भूल गईं वे बातें ?

एक रोज़ तुम ही कहती थीं, भूल न जाना, प्रेम निभाना।
अनजाना कर दिया हाय पर, आज वही जाना पहिचाना॥
मैंने सब कुछ छोड़ दिया पर, देवी ! अपने वचन न छोड़े।
जग से नाता तोड़ दिया पर, शुभे ! प्रेम के बन्ध न तोड़े॥

आज सर्पिणी सी वे रातें।
क्या तुम भूल गईं वे बातें ?

तुम मेरी हो

[३२]

तुम मेरी हो लेकिन तुम पर, अब मेरा अधिकार नहीं है।
आता और चला जाता हूँ, अब मेरा सत्कार नहीं है॥

मैंने अपना सब कुछ देकर–
केवल प्यार तुम्हारा पाया।
उसमें भी अन्यायी जग ने,
जाने कितना ज़हर मिलाया॥

मैं विष मिला प्यार पीता हूँ,
मुझे मौत कैसे आयेगी?
मैं विष पीकर भी जीता हूँ,
मेरी जीत कहाँ जायेगी?

मैंने अपना मन हारा है, यह तो मेरी हार नहीं है।
तुम मेरी हो लेकिन तुम पर, अब मेरा अधिकार नहीं है॥

अधिकार

[३३]

तन पर है अधिकार इन्हों का, पर मन पर अधिकार तुम्हारा।
तन तो क्षणभंगुर है प्रियतम! पर अनन्त है प्यार हमारा॥

ये सब हमें अलग करते हैं,
अलग किन्तु कर भी पायेंगे।
तन पर बन्धन लग सकता है,
मन तो साथ साथ जायेंगे॥

देखो प्राण! हृदय में देखो,
मेरे प्राण कहाँ रहते हैं।
नाथ! न रोओ, बहुत रो लिये,
ऊसर में मोती बहते हैं॥

आज हमारी हत्या होती, प्रिय! कोई भी नहीं हमारा।
तन पर है अधिकार इन्हो का, पर मन पर अधिकार तुम्हारा॥

मृत्युञ्जय

[३४]

तुम भ्रम हो या भगवान शुभे ! या विनिमय जय, लय क्रय विस्मय ।
प्रतिपल जलता पर जला नहीं, हृदयाग्नि बन गई मृत्युञ्जय ॥

रँग रँग निज रक्त-बिन्दुओं से,
संसार सजाया करता हूँ ।
एकाकी मूक निमन्त्रण से,
छवि ! तुम्हें बुलाया करता हूँ ॥

मैं चित्र तुम्हारे खींच रहा,
जो कुछ कहता तुम से कहता ।
मैं तुम से कोसों दूर किन्तु–
पल भर भी दूर नहीं रहता ॥

चित्रित सा कब से देख रहा, मन-मूर्ति ! तुम्हारे सब अभिनय ।
तुम भ्रम हो या भगवान शुभे ! या विनिमय जय, लय क्रय विस्मय ॥

रो पड़े

[३५]

रो पड़े और कुछ कह न सके।
बस गये नयन में नयन किन्तु, जग की आँखों में रह न सके।
अपने सुख दुख की कह न सके॥

मिल गये भाग्य से कल पथ पर,
पर अधर न दोनों खोल सके।
दीवार बन गया, वह्नि-विश्व,
हम जले, किन्तु क्या बोल सके?

कितने हतभागे सब छोड़ा,
पर पाया फिर भी प्यार नहीं।
हँसना कैसा? रोने तक का,
हम दोनो को अधिकार नहीं॥

हम मिले किन्तु कुछ कह न सके।
दुनिया वाले हम दोनों का, रोना हँसना कुछ सह न सके।
अपने सुख दुख की कह न सके॥

बस गये नयन में नयन किन्तु, जग की आँखों में रह न सके।
रो पड़े और कुछ कह न सके॥

मौत न आती

[३६]

मन में याद सिसकती तन में, प्राण तड़पते, मौत न आती।
अग्नि हृदय में, अग्नि दृगों में, पीड़ा मुझसे कही न जाती॥

जिनके श्वास श्वास में रोदन,
वे नर जीकर भी क्या करते?
पी लूँ जहर और मर जाऊँ,
पर विष पीकर कायर मरते॥

किसको अपना हृदय दिखाऊँ,
किससे अपनी व्यथा कहूँ मैं?
जीवन और मृत्यु दोनों ही–
रूठ गये फिर कहाँ रहूँ मैं॥

मेरे ही कन्धों पर प्रतिपल, मेरी अर्थी उठ उठ जाती।
मन में याद सिसकती तन में, प्राण तड़पते, मौत न आती॥

मैं न बचूँगा

[३७]

मैं न बचूँगा, "नीचे ले लो", कोई उन्हें बुला लाओ ।
मूक वेदना, मूक निमन्त्रण, आओ आओ आ जाओ ।।

खटिया से लग गया, लग गया—
मन जिस दिन तुम से रानी !
उसी रोज़ से बहता रहता,
प्रतिपल आँखों से पानी ।।
लेकिन बुझी न आग हृदय की,
स्नेह अग्नि में जला नहीं ।
कवि की आँखों के आँसू हैं,
कवि की कोई कला नहीं ।।

आओ आओ कवि की कविता, गाओ गाओ सब गाओ ।
मैं न बचूँगा, "नीचे ले लो", कोई उन्हें बुला लाओ ।।

प्रेरणा

कहना, साथ ले चलो साड़ी,
कफन उन्हों के पास नहीं।
कहना, जिसमें याद न तड़पे,
ऐसा कोई श्वास नहीं॥
कहना, भिखमंगे को चलकर,
अन्त समय दर्शन दे दो।
पड़ी हुईं हड्डियाँ खाट पर,
चलकर संजीवन दे दो॥

या तो प्राण बचालो या तुम, आकर चिता जला जाओ।
मैं न बचूँगा, "नीचे ले लो", कोई उन्हे बुला लाओ॥

जल चुके

[३८]

अश्रु हैं चुग लो उन्हें तुम, चाव मेरे जल चुके हैं ।
क्या लिखूँ ? क्या दूँ तुम्हें मैं ? भाव मेरे जल चुके हैं ।।

बन भिखारी प्यार माँगा,
पर दिये अङ्गार जग ने ।
फूल तोड़े, शूल छोड़े,
यह किया सत्कार जग ने ।।
घाव हैं अब, हाय ! है अब,
याद है, पीड़ा कसकती ।
चाँदनी के चरण चूमूँ,
चाह यह रह रह चसकती ॥

गीत दुनिया ने जलाये, नयन रो रो गल चुके हैं ।
अश्रु हैं चुग लो उन्हें तुम, चाव मेरे जल चुके हैं ।।

दो क्षण बाद

[३९]

केवल दो क्षण का परिचय था।
केवल दो क्षण का नाता था।
कैसे मेरा साथ निभातीं ?

मैंने तुमसे तभी कहा था, मेरा पथ शूलों का पथ है।
तब तुमने कह दिया प्यार में, यह पथ तो फूलों का पथ है॥
भोली थीं कह गईं भूल में, अच्छा है अब सँभल गईं तुम!
प्रेम निभाना सहज नहीं था, अच्छा है अब बदल गईं तुम॥
मैं दुःखों के बीच पला था, कैसे दुख में सुख बन जातीं ?

केवल दो क्षण का परिचय था।
केवल दो क्षण का नाता था।
कैसे मेरा साथ निभातीं ?

दो क्षण बाद

मैंने तुम से तभी कहा था, यह जग चूट चूट खायेगा !
मेरा हृदय शुद्ध गङ्गाजल, पर जग दोषी बतलायेगा ॥
राखी बाँधी, बहिन बनी हो, लेकिन नाता तोड़ न देना ।
जब जग मुझको बुरा कहेगा, तब तुम भी मुँह मोड़ न लेना ॥
लेकिन हतभागे भैया को, तुम ही कैसे गले लगातीं ?

केवल दो क्षण का परिचय था ।
केवल दो क्षण का नाता था ।
कैसे मेरा साथ निभातीं ?

तब से तुम भगवान और मैं, भक्त तुम्हारी पूजा करता ।
तब से तुम अभिमान और मैं, आँसू पी पी प्यासा मरता ॥
यदि तुम मेरा साथ निभाता, जग मेरा अपमान न करता ।
मेरा हृदय तोड़कर फिर यह, पापों पर अभिमान न करता ॥
पर जिसको जग ने ठुकराया, उसको तुम कैसे अपनातीं ?

केवल दो क्षण का परिचय था ।
केवल दो क्षण का नाता था ॥
कैसे मेरा साथ निभातीं ?

[४०]

जिनके पत्र रोज़ आते थे।

मेरे बिना तड़पते थे जो, मेरे बिना नहीं खाते थे॥
अब वे भौंहें तान तान कर,
घर से धक्के दे देते हैं।
सहसा मेरे आंसू गिर कर,
उनके चरण चूम लेते हैं॥
अब यदि कभी निकल जाता हूँ,
मैं उनके घर के आगे को।
वे कुछ और समझ लेते है,
भोले भाले हतभागे को॥

क्यों कि वहां बन गई सगाई, जिसमे इन सब से नाते थे।
जिनके पत्र रोज़ आते थे॥

तब तक बरसो

[४१]

बरसो बरसो तब तक बरसो, जब तक मेरे नयन बरसते।
तड़पो तड़पो तब तक तड़पो, जब तक मेरे प्राण तरसते॥

रोओ रोओ, इतने रोओ,
जिससे उन्हें तरस आ जाये।
जो कवि को दिन रात सताते,
उनको कवि की याद रुलाये।
प्रेम! कहाँ हो, प्राण! कहाँ हो,
गीत यही कानों में आये।
बरसो बरसो इतने बरसो,
मेरा दग्ध हृदय बुझ जाये॥

सिसको सिसको, ऐसे सिसको, जैसे मेरे श्वास सिसकते।
बरसो बरसो तब तक बरसो, जब तक मेरे नयन बरसते॥

कह न सका मैं

[४२]

तुम से मुझे बहुत कहना था, लेकिन कुछ भी कह न सका मैं।
एक निमिष भी स्वतन्त्रता से, पास तुम्हारे रह न सका मैं॥

हम दोनों को अलग अलग कर,
दुनिया ने मन-चाही करली।
गङ्गा चली, हिमाचल रोया,
अन्धकार ने कौली भरली॥
गहन तिमिर में तैर रहा मैं,
लेकर खारी जल का सम्बल।
देवि! विरह से जला जा रहा,
आज वियोगी का अन्तस्तल॥

सब कुछ सहा, सहे दुतकारे, विरह तुम्हारा सह न सका मैं।
तुमसे मुझे बहुत कहना था, लेकिन कुछ भी कह न सका मैं॥

मना किया था

[४३]

मैंने तुम से मना किया था, जग से मन की बात न कहना।
मैंने तुमको समझाया था, जग से सावधान ही रहना॥

तुमने अपना हृदय चीर कर,
क्यों पापी जग को दिखलाया।
तुम रोये वे बनना समझे,
जग तुमको पहिचान न पाया॥

इस हत्यारे जग के आगे,
तुमने आँसू व्यर्थ बहाये।
ये सब और नमक छिड़केंगे,
तुमने जिनको घाव दिखाये॥

आज प्रेम की शपथ तुम्हें है, सब कुछ चुपके चुपके सहना।
मैंने तुमसे मना किया था, जग से मन की बात न कहना॥

मुझे याद है

[४४]

मुझे याद है।

शुद्ध हृदय से तुमने मुझको, मैंने तुमको वचन दिये थे।
मेरे ऊपर होली के दिन, तुमने चार फूल फेंके थे।
और किसी ने पाप समझकर, इसकी चर्चा घर घर की थी।

मुझे याद है।

तुम्हें एक दिन हाथ काटकर, मैंने अपना रक्त दिया था।
शपथ उठाकर आँखें भरभर, एक रोज़ तुम बहिन बनीं थीं।
तुम मेरी थीं, जग मेरा था, तुम रूठीं जग ने दुतकारा।

मुझे याद है।

पिंजरे से छुट गिरता पड़ता, ठोकर खाता तुम तक पहुँचा।
लेकिन तुमने द्वार बन्दकर, दुनिया से क्या क्या सुनवाया।
भूल गई तुम मैंने तुमको, श्रद्धा से भगवान बनाया।

मुझे याद है।

मुझे याद है

[४५]

मुझे याद है।

करवट पर श्वासें चलती थीं, मैंने तुमको बहुत बुलाया।
रुग्ण तड़पता रहा हाय! पर, तुम्हें उन्होंने क़ैद कर लिया।
क़दम क़दम पर गिरता पड़ता, मैं बीमार वहाँ तक पहुँचा।
किन्तु उन्होंने धक्के देकर, दर्वाज़े से मुझे निकाला।
तुम भी रोयीं, मैं भी रोया, लेकिन उनको तरस न आया।

मुझे याद है।

मुझे याद है

[४६]

मुझे याद है।

सब के आगे, शपथ उठाकर, उस दिन तुमने किया फैसला।
'जब भी मिलो हमारे आगे', मैं बोला 'स्वीकार हमें है'।
मैंने यह भी तभी कहा था, 'देखो, इससे बदल न जाना'।
तुमने कहा 'नहीं बदलेंगे', लिखलो 'ये ध्रुव सत्य वचन हैं'।

मुझे याद है।

मैंने एक रोज़ यह पूछा, 'क्या वचनों से बदल गये तुम'?
तुम बोले 'वे नहीं मानतीं', मेरे घर से नाराज़ी है।
मैं बोला, 'निर्णय के दिन भी, उसी जगह वे खड़ी हुई थीं'।
ठोक बजाकर, सोच समझकर, तुमने मुझको वचन दिये थे।

मुझे याद है।

मुझे याद है

[४७]

मुझे याद है।

तुम अपने हो पर तुमने ही, घर घर में बदनाम कर दिया।
और किसी भोली भाली का, आना जाना बन्द कर दिया।
लेकिन शपथ लेखनी की मैं, सदा तुम्हारा बना रहूँगा।
सदा तुम्हारा शुभ चिन्तक हूँ, कभी न तुमको बुरा कहूँगा।

मुझे याद है।

मुझे याद है

[४८]

मुझे याद है।

मेरी हार जीत दुनिया की, यही प्रणय-उपहार मिला था।
जिसको सब कुछ दिया उसी ने, मुझे एक दिन शाप दिया था।
हँसते हँसते बड़े प्रेम से, मैंने सब स्वीकार किया था।

मुझे याद है।

मुझे याद है

[४९]

मझे याद है ।

व्यापारी बन, टुकड़े खाने, तुम मेरे घर पर आये थे।
मैने दे दी शरण तुम्हें, तुम– घर के अधिकारी बन बैठे।
मुझे क़ैद कर बने हुए हो, मेरे राज ताज के मालिक।

मुझे याद है।

"लाल क़िले" को खोद खोद कर, मेरे सारे रत्न ले गये।
मुझे कफन तक दिया नहीं, तुम– लूट तख़्त-ताऊस ले गये।
मुझे सताया, मुझे रुलाया, मुझ पर अत्याचार किये हैं।

मुझे याद है।

मेरा शोणित बहा और तुम, कहलाते हो वीर विजेता।
मैने रक्षा करी तुम्हारी, पर मै नंगा भूखा मरता।
मेरे दम से विजय हुई है, पर तुम राजा मै बन्दी हूँ।

मुझे याद है।

मुझे याद है

[५०]

मुझे याद है।

गर्ज गर्ज कर, घुमड़ घुमड़ कर, काले बादल बरस रहे थे।
तूफानों में खड़े हुए हम, विधि का नर्तन देख रहे थे॥
आँधी आई, गिरा एक तरु, टूट टूट कर गिरे घोंसले।
अण्डे फूटे दबे तनों से, कुछ चिड़ियों के बच्चे कुचले॥
वहीं एक अधमरा कबूतर, मृत्यु-भूमि में तड़प रहा था।
दृष्टि दूसरी ओर गई तो, देखा गिरा फूस का छप्पर॥
भंगी का कच्चा घर टूटा, दबे पड़े थे नीचे बालक।
और उधर ऊँचे महलों में, मानवता लज्जित होती थी॥

मुझे याद है।

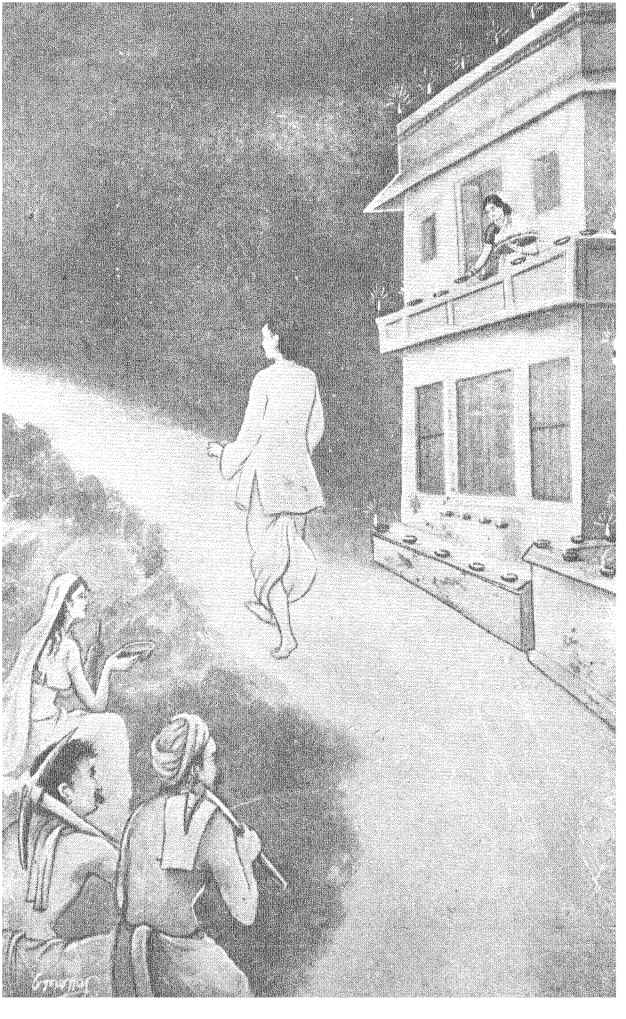

[५१]

सूनी पगडण्डी पर—
नीरव वियोगी के—
अश्रु ही पाओगे।
एकाकी सृष्टि में और क्या रक्खा है ?
देखो किसानो को,
दुखियों को देखो कवि !
प्रौढ़ की अर्थी सी विधवा को देखो कवि !
चिथड़ों में रोती अपनी जवानी को—
छोड़कर जाते हो।

जिसका सुहाग तो विधि ने जलाया किन्तु—
दुनिया भी जिसके रक्त की प्यासी है।
एक ही बेटा जिस अन्धे पिता के हो—
और वह मर जाये अपनी जवानी में—
मरघट में जाती हो जलने को लाश जब—
वृद्ध के अन्तर की अग्नि वह देखो कवि !
विधवा के अन्तर की आग वह देखो कवि !
देखो प्रकृति को, कण कण को देखो कवि !

प्रेरणा

अन्तर की मूक ध्वनि कविता तुम्हारी कवि!
विप्लव की जलती आग वाणी तुम्हारी कवि!
घट घट के वासी तुम,
मझधार तरणी के माँझी, पतवार, तट,
दीपों के दिव्य स्नेह,
भावों के चित्रकार,
सुन्दर सुगन्ध तुम,
साहस के सेनानी,
उलझी पहेली की, सुलझन साकार तुम,
उछटा सा हृदय है, सुन्न से जाते हो
आँखो में अश्रु किन्तु, मुस्कान अधरों पर,
वैभव के महलों में—
दुखियों की दुनिया में—
तुमने न पाया कुछ,
चल दिये जाने किस अज्ञात पथ पर कवि!
खँडहर तुम्हारे से माँगते बीते दिन,
त्यक्ता तुम्हारे से माँगतीं प्रेमामृत,
ग्रामो को चाहिये तुमसे बलिदान कुछ,
भारत का राज्य ताज तुमको दिलाना है,
दुर्ग पर अपना तिरंगा लगाना है,
अन्तर की मूक ध्वनि तुमको सुनानी है,
दुखियों के मस्तक पर रोली लगानी है,
पतितों को प्यार से राह पर लाना है।

शून्य

हाय ! तुम जाते हो रोते मज़दूर वे,
पृथ्वी की सुन्दरता आँसू बहाती है,
प्रकृति की उँगली से बिछुवे निकलते हैं,
कौन फिर समझेगा प्रेम की महिमा कवि !
कौन फिर दुखियों के हृदय को समझेगा ?
कौन फिर श्रमिकों के श्रमकण के बदले में—
आँखों से मणियों की लड़ियाँ लुटायेगा ?

किसने पुकारा यह ?
किसकी यह प्रेरणा ?
कौन अज्ञात तुम ?
रोकते कवि को क्यों ?
उसका अब कौन है ?

पाषाण—प्रतिमा को प्यार से देकर प्राण—
आज भिखमंगा सा, पागल सा फिरता है,
प्रेमी तपस्वी हाय ! पापी कहाता है,
प्यार वह खोया, कवि शून्य में जाता है।

दुनिया में प्यार वह हार बन हँसता है !
जलता समाज बन बींधता रहता है !
कहता है नीच आज उसको जो सबका है !
देखो वह महलों में झूमती सुन्दरता—
उसके ही शोणित से सजकर जलाती दीप ,
विधवा बिचारी का उसने बुझाया दीप।

प्रेरणा

कवि का बुझाया दीप,
जग के बुझाये दीप।

रोओ मत कृषकों तुम,
रोओ मत मजदूरों !
रोओ मत प्रकृति देवि !
दुनिया से दूर है, प्रेम की दुनिया प्राण !
ढूँढने निकला सत्य, ढूँढने निकला प्रेम,
जलते वियोगी की ज्वाला बुझाने को-
ढूँढने निकला मन-मन्दिर की प्रतिमा मैं,
दुखियों की दुनिया में दीपक जलाने को-
ढूँढने निकला स्नेह।
आज तुम सब का सुख ढूँढने निकला कवि !
रोओ मत कवि के प्राण !
रोओ मत जग के त्राण !
रोको मत, जाने दो।
उसके दर्बार में-
जिसके दर्बार में-
दुखियों की जाती आह।

दहेज

[५२]

चाँद चातुर्य सी, कुन्दन सी, कलिका सी,
यौवन की डाली पर—
पन्द्रह वर्षीय छवि रचना सी खिल उठी।
ढूँढने निकले वर, कन्या के पिता वृद्ध।
इससे पूछ, उससे कह,
अन्ततोगत्वा पा पता एक लडके का—
तत्काल जा पहुँचे उसके पिता के पास,
सेठ जी बैठक में कुर्सी पर बैठे थे।
"बैठिये" कह कर इनको बिठाया फिर—
बोले नय छोडकर,
"कहिये, क्या काम है ?"

सेठ जी ! कन्या का सम्बन्ध करना है—
आपके लडके से।

गम्भीर मुद्रा से रूखे से ओठों से—
सेठ जी यह बोले,

प्रेरणा

रिश्ते अनेकों ही आ रहे लड़के के,
"कार वे देते हैं",
"रेडियो वे देते",
"देते वे दस हजार",
"बीस वे देते हैं",
वह लड़की बी० ए० है,
वह लड़की एम० ए० है,
देखिये होता है सम्बन्ध किसके साथ।

कन्या के पिता ने एक ली लम्बी श्वास,
और फिर बोले वे–
जितना दहेज भी चाहोगे दूँगा मैं,
एक ही कन्या है,
शिक्षित है, सुन्दर है,
सौदा सा होकर वह सम्बन्ध तय हुआ।

पहुँची बरात जब–
सेवा सत्कार में तत्पर थी लक्ष्मी,
अन्नकूट उत्सव था।
अन्नपूर्णा थी पूर्ण।
कन्या विदा के साथ–
लादा दहेज जब–
देखने वाले सब–
करते थे वाह! वाह!

दहेज

सोने के थाल थे,
चाँदी के थाल थे,
पोत की साड़ियाँ—
हीरों के आभूषण,
यह भी था, वह भी था।
आखिर सन्दूक एक—
लड़की के बाप ने लड़की को दे दिया।
पूछा यह समधी ने—
इसमें क्या चीज़ है?
पूछा यह बेटी ने—
पिता जी! इसमें क्या?
वृद्ध यह बोला तब—
बेटी! यह मत पूछे।
कौतूहल छा गया,
भीड़ घिर आई थी।
लड़के के बाप ने खोला सन्दूक वह—
दस गज के लगभग कुछ कपड़ा पड़ा था मूक।
लड़की के पिता से लड़के ने पूछा यह—
पिता जी! यह क्या है?
उत्तर में सुना यह—
"लड़की का कफन है।"
"बेटी! यह तेरा अन्तिम दहेज है।"

लगन

[५३]

प्रेम के प्रमाण हम,
सत्य के प्राण हम।
सरों पर दुनिया की नंगी कृपाण है।
मंजिल पर आग है,
कितने भूचाल हैं।
किन्तु इस सागर को पार ही करना है।
लक्ष्य पर जाना है।
प्रेम यह निभाना है,
आग पर चलना है।
तप कर निखरना है।
जलना है किन्तु, साथ साथ ही जलना है।
एक ही चिता में बैठ मुक्ति तक जाना है।

अहिंसा

[५४]

श्रद्धा तपस्या सी,

सीधी कबूतर सी,
सन्तो की वाणी सी,
साधना शहीदो की,
देवत्व देती हो।
कवियो की कला हो देवि !
जननी "प्रह्लाद" की,
गाँधी की भक्ति हो,
भारत की शक्ति हो,
शासन जिस शक्ति से काँपता रहता है,
दासत्व दानवता दूर ही रहती है,
मुक्ति वरदान हो,
तुम पर अभिमान है,
याद है "यतीन्द्र" वीर
सुमन "देव सुमन" की समाधि पर रक्खे हैं,
और भी अनेको वीर बलिभूत भारत के-
भावो में भ्रमण कर कविता में आते हैं।
मरना सिखाते हैं,

प्रेरणा

फाँसी के तख्तों पर गीत यह गाते हैं–
"मरना सिखाने को मरना ज़रूरी है",
दासत्व ढाने को मरना ज़रूरी है।
ताज पहिनाने को मरना ज़रूरी है।
दीपक जलायें हम उनकी समाधि पर,
फूल बरसायें हम उनकी समाधि पर,
आँसू बहायें हम अपनी गुलामी पर,
मुक्त वे और हम दासत्व सहते हैं।
दिव्य सन्देश से डगमग डग करते पग–
क्रान्ति से चलते हैं,
लेकर अहिंसा बल।
विजयनी पताका यह,
कितने ही हिंसक राज्य जल चुके ज्वाला में,
पश्चिम में दहकी थी अग्नि पर बुझ गई,
लेकिन यह आग में सीता सी जीवित है,
पाप जल जायेंगे सत्य सी रहेगी यह,
परिवर्त्तन करने को।
हल चल सी चलती है–
इसकी पग-ध्वनि में क्रांति जय जय जय करती है।
इसके पुजारी कृष्ण करते हैं शंख नाद,
चमत्कृत चरणों में,
भव्य बलिवेदी पर,
वीरों के मन्दिर में,
फाँसी के तख्तों पर,
सुषमा नत मस्तक सी।

प्रणयनी

[५५]

गंगा के तट पर कवि डेरे में बैठा था।
गिरती थी टूट टूट धाँगे जल-धार में।

लहरों की गति थी तीव्र,
फाड़ हृद पर्वत का सिहनी जाती थी।
तोड़ती चट्टानें,

प्रेरणा

पथ की बुझाती आग,
अपने जगाती भाग्य,
कितने ही रोड़ों ने,
रोकी गति गङ्गा की,
किन्तु वह रुक न सकी,

चरणों में झुक न सकी,
अपने प्रिय प्रियतम के–
चरणों में गिरती है,
सागर से मिलती है।
प्रियतम के अन्तर की–
ज्वाला बुझाने को–

कौन यह आँखों से पानी बहाती है।
या कहीं सदियों से–
जलती तड़पती थी,
प्रियतम से मिलने को,

पत्थर हिमालय ने पथ रोक रक्खा था,
फोड़कर आई है आज यह पत्थर को,
हिचकियाँ भरती है,
दुनिया से डरती है।
प्रियतम के पैरों में दौड़ कर गिरती है।

हत्या

[५६]

तट पर त्रिवेणी के–

चिन्तित खड़ा था मैं।
पास ही मरघट में–
जलतीं चितायें थीं।
मैं वहाँ जा पहुँचा।
हड्डियाँ बिखरी थीं,
दुर्गन्ध उड़ती थी।

हत्यारे कुत्ते कुछ–
खींच कर ले आये,
अधजला एक शव।
मैंने जो देखा, वह–
षोड्शी बाला थी।

विधि ने यह क्या किया?
सुन्दरता निर्मित कर–
राख कर डाली क्यों?

प्रेरणा

जाने किस प्रेमी की प्यास बन जाती यह,
जाने किस कवि की कविता कहाती यह,
जाने किस घर में दीपक जलाती यह।
किस घर की हरियाली हाय! यह मिट्टी है।
किस की दिवाली यह धूलि में मिलती है।

कौन हो देवी! तुम?
बोलो कुछ बोलो तो।
मर गईं लेकिन तुम—
मर कर भी सुन्दर हो।
चमक से तुम्हारी देवि!
चाँद-द्युति लज्जित है,
दमक से तुम्हारी देवि!
तट पर दिवाली है।
दिव्य मुख-मंडल में—
मरघट में बिखरी ज्योति।
किस की दुलारी हो?
बहिन हो किसकी तुम?
किसके मन-मन्दिर की—
बोलती प्रतिमा हो?
किस घर की छम छम हो?
और ये कुत्ते क्यों खा रहे तुमको देवि!

सुनकर यह एक दम—
गर्ज कर बोला शव।
मूक हो जाओ कवि!

हत्या

मरने पर कुत्ते ये–
खाते हैं खाने दो।
किन्तु जो जीवित को–
खा गये हत्यारे–

उनका क्या कर लिया ?
कितने ही जिन्दों को–
खा गई दुनिया यह,
देखो इस मरघट की भस्मी में देखो तुम,

कण कण में देखो तुम,
कितनों की तड़पन है।
कितनो की धड़कन है।
कितने ही शलभ रोज़–
जलते चिताओं में–
कितनी ही रश्मियाँ–
बुझतीं चिताओं में।

अच्छा ही हुआ यह–
छुट गई दुनिया से,
अन्यथा दुनिया में–
रात दिन जलती मै।

पापिन कहाती मैं,
पापी कहाते वे।
प्रेम के बदले में–
गालियाँ खाते हम।

अच्छा ही हुआ जो मर गई खाकर विष–

प्रेरणा

बन गई हत्यारी,
मैंने जब खाया विष गर्भ था मेरे तब–
मास दो तीन का।
बोली मैं प्रियतम से–
साथ मत देना छोड़।
सहम कर बोले वे–
हाय! अब क्या होगा?
साहस कर बोली मैं–
बन गये कायर तुम,
विवाह हम कर चुके गान्धर्व रीति से।
जैसे दुष्यन्त ने–
'मेनका कन्या' से–
शादी कर की थी रति।
वैसे ही बन चुके–
नाथ! तुम मेरे पति।
किन्तु वे डर गये–
क्षणिक बदनामी से–
छोड कर चल दिये।
गर्व था जिन पर वे बन गये कायर हाय!
किन्तु वे मेरे पति,
और मै उनकी हूँ।
पर लोक चर्चा से बच गई मरकर मै,
बच गई बदनामी,
जननी की प्रियतम की।

हत्या

खिलने से पहिले ही जल गई कलिका कवि !
लेकिन यह दुःख है साथ वे दे न सके।
मैं ही क्या कितनी ही जल चुकीं ऐसे ही।
बोलो कवि ! क्या किया मैंने वह पाप था ?
बोलो कवि ! क्या किया मैंने यह पाप है ?

सहमा सा सुनता था,
उसकी कहानी यह।
कल्पना कानों में कविता सुनाती थी।
सामने आकर आँसू बहाती थी,
कहती थी दुनिया में कौन कब किसका है ?
अन्तर से सहसा ही निकली यह प्रेरणा—

'हाय ! यह सुकुमारी'—
मर गई और मैं पहिले से मिल न सका।
मरने न देता मैं।
मृत्यु से भिड़ जाता।
मिल गई मिट्टी में,

दिव्य सुन्दरता यह—
दुनिया की हाय से,
क्षण भंगुर प्रेम से,

किन्तु क्यों कायर बन स्वा लिया इसने विष !
इसको पलटना था पाप के नियमों को,
अपने समाज को,
नर को अधिकार सब, नारी को कुछ नहीं।
दो दिन की दुनिया में—

प्रेरणा

दुनिया की चर्चा क्या ?
एक दिन मिट्टी में–
सब को ही मिलना है।
एक दिन मरघट में–
सब को ही सोना है।
अस्थिर यह विश्व है।
स्थिर है मानवता।
श्रद्धा ही सत्य है,
दुखियों से प्रेम कर,
बनते तपस्वी नर।
प्रेम के सम्बल से–
मुक्ति पा लेते हैं।

मृत्यु की गोदी में, सो गईं सुख से पर–
पीड़ित है कवि का हृद् देखकर दुर्बलता,
मौत का हँस कर, जो आलिंगन कर सकती–
विधि के विधान भी उलट वह सकती है।

मानव के नियम क्या ?
तुम तो मृत्युञ्जयि थीं,
सती सावित्री थीं,

यम से भी छीन जब सकती थीं पति को तुम–
छीना फिर क्यों नहीं पाप की दुनिया से ?
छीने फिर क्यों नहीं अपने अधिकार, देवि !
रूढ़ी के नियमों की होली जलाकर तुम–

हत्या

और प्रिय प्रियतम की फूक कर कायरता,
साथ साथ पति के ही जातीं विजयिनी सी,
रूढ़ी के रोगी पर खा गये तुमको देवि !
खा गये कितने ही शिशु से अरमान वे,
खा गये अपने ही आप निज बेटी को,

बच्चे की हत्या की।
दोनों के जलते हृद् उनके नियम हैं देवि !
दोनों की लाशों पर नृत्य अब करलें वे,
दोनों की हड्डियाँ उनके परिवार हैं।

वह मेरा है

[५७]

वह मेरा है।

जिसने मेरे लिये सहन की,
सारी दुनिया की बदनामी।
जिसने मेरे लिये जलाई,
अपनी हँसती हुई जवानी॥

जिसके दग्ध हृदय से निकलीं,
मेरे पीड़ित मन की आहें।
मेरा सुख बन मुझे ढूँढतीं,
जिसके जीवन की सब चाहें॥

वह मेरा है।

वह मेरा है

जिसके जीवन के पतझड़ में,
मैं पतझड़ बसन्त बन जाती ।
जिसके हृदकानन की कलिका,
मुझे देखते ही खिल जाती ॥

मेरा प्यार ताज जननी का,
जिसको केवल यही चाहिये ।
किसी दुखी का दुःख मिटाना,
जिसको प्रतिपल यही चाहिये ॥

वह मेरा है ।

किसी तरह भारत स्वतन्त्र हो,
बस जिसका उद्देश्य यही है ।
मेरी इच्छा मुझे हँसाना,
जिसका जीवन ध्येय यही है ।

जो दो मीठे बोल बोलता,
दुखिया का सत्कार वही है ।
जिसकी आँखों में दो आँसू,
अबला का अधिकार वही है ॥

वह मेरा है ।

मैं उसका हूँ

[५८]

मैं उसका हूँ।

विधि ने जिसके लिये सृष्टि रच,
कवि का भावुक हृदय बनाया।
कवि ने जिसके लिये विश्व में,
भावों से संसार सजाया॥

भावों ने जिसके स्वागत में,
सौरभ से आँसू बरसाये।
आँसू जिसके दीप बन गये,
दीपों पर पतङ्ग उड़ आये॥

और पतंगों पर प्रेमी का,
प्यार बना जिसका तन, मन, धन।
दीप-शिखा पर जल जाता है,
जिसका हँसता खिलता जीवन॥

मैं उसका हूँ।

मेरे होते हुए

[५६]

तुम क्यों घबराती हो देवी !

मेरे होते हुए कभी भी–
तुम पर आँच नहीं आयेगी।
सब सह लूंगा, किन्तु तुम्हारी–
दूरी नहीं सही जायेगी॥

पहिले मेरी राख उड़ेगी,
धूलि तुम्हें तब सता सकेगी।
हम दोनों की सच्चाई का,
पता क़लम यह बता सकेगी॥

तुम क्यों घबराती हो देवी !

विश्वास

[६०]

यह विश्वास बनाये रखना।

चाहे कवि की पिसे हड्डियाँ,
पर वह प्यार नहीं छोड़ेगा।
चाहे उसे सताये कोई,
वह सत्कार नहीं छोड़ेगा।

चाहे तड़पे चाहे सिसके,
वह संसार नहीं छोड़ेगा।
चाहे तुम दर से ठुकराओ,
पर वह द्वार नहीं छोड़ेगा॥

यह विश्वास बनाये रखना।

तुम क्या जानो ?

[६१]

तुम क्या जानो ?

कवि का अन्तर, निर्धन का मन,
और किसी विधवा की विपदा।
किसी डूबते के सम्बल बन,
उसे किनारे तक पहुँचाना॥
देकर वचन, प्रतिज्ञा करके,
ताने सह सह प्रेम निभाना।
किसी व्यथित का हृदय थाम कर,
उसको अपना प्यार पिलाना॥

तुम क्या जानो ?

जिसके पथ में वज्र पड़े हैं,
उसके पथ में फूल बिछाना।
जिसको सारी दुनिया झिड़के,
उसका प्रतिपल साथ निभाना॥
देख किसी की आँखों में जल,
आँखे भर भर कर समझाना।
जिसको अपना कहा एक दिन,
जन्म जन्म में उसे निभाना॥

तुम क्या जानो ?

समाधि तक

[६२]

पाल नहीं, पतवार नहीं पर– पार करेंगे यह वैतरणी ।
मधु निर्झरणी !

जहाँ वियोगी की समाधि है,
वहाँ तुम्हें मैं ले जाऊँगा ।
तुम समाधि पर फूल चढ़ाना,
मै दृगमणियाँ बरसाऊँगा ॥

यह सागर उसकी आँखों से,
होड़ लगा कर हार चुका है ।
इसको बाँध दिया सीमा ने,
वह सीमा से नहीं रुका है ॥

तूफानों में तैर तैर कर, तैराऊँगा जर्जर तरणी ।
पाल नहीं, पतवार नहीं पर– पार करेंगे यह वैतरणी ।
मधु निर्झरणी !

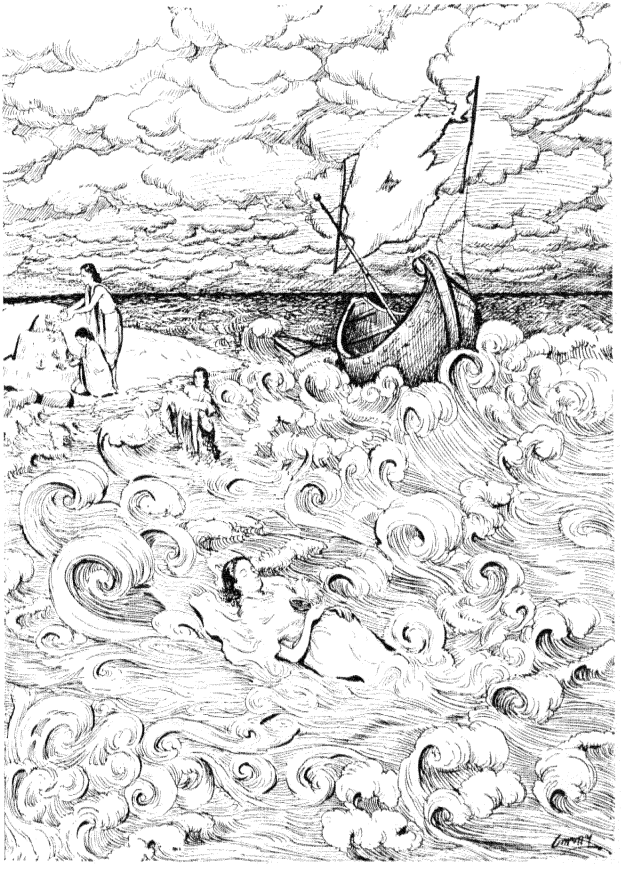

समाधि तक

इसे देव, दानव ने पीसा,
वह दुनिया से फुका पड़ा है।
यह चरणों में झुका किन्तु वह—
मस्तक ऊँचा किये खड़ा है ॥

इसने मणियाँ धरीं छिपाकर,
उसने निज निधि खूब लुटाई।
यह बड़वानल बुझा न पाया,
उसने जग की आग बुझाई ॥

सागर ही क्या ? वैतरणी के— उस तट तक जायेगी तरणी।
पाल नहीं, पतवार नहीं पर— पार करेंगे यह वैतरणी।
मधु निर्झरणी !

सत शहीद की शुभ समाधि पर—
दीप जलाने आज चले हम।
वीर वियोगी की समाधि पर—
फूल चढ़ाने आज चले हम ॥

वह उसकी समाधि है जिसके—
आँसू इतिहासों के अक्षर।
वह उसकी भस्मी है जिसका—
लक्ष्य भव्य भावों का अन्तर ॥

तुम्हें वहाँ तक ले जाऊँगा, चाहे धधक उठें नभ, धरणी।
पाल नहीं, पतवार नहीं पर— पार करेंगे यह वैतरणी।
मधु निर्झरणी !

[६३]

कब पिँघले हैं पाषाण-हृदय ?

कैदी की करुण-कराहों से,
कवि की दुख भरी कहानी से।
मरघट में बिखरे फूलों से,
आँखों के खारी पानी से॥
जिसको समाज ने ठुकराया,
उसके अन्तर की आहों से।
कब चाँद हाथ आया बोलो,
पागल चकोर की चाहों से ?
कब किसी व्यथित की हुई विजय ?
कब पिँघले हैं पाषाण-हृदय ?

कवि ने सब कुछ बलिदान किया,
पर कहो, मिला कब उसे प्यार ?
कब साथ निभाया साथी ने ?
कब पाया उसने स्वाधिकार ?
कब पतझड़ ने देखा बसन्त ?
कब सुख ने दुख का किया अन्त ?
कब चाहों में मन बना सन्त ?
कब मिला विश्व में वह अनन्त ?
निर्मित कर जला दिये निश्चय।
कब पिँघले हैं पाषाण-हृदय ?

मेरी नींद

[६४]

मेरी नींद कहाँ जा सोई, बोलो तारों ! बोलो कोई ।
मै एकाकी मूक रुदन में, मेरी मौत ज़िन्दगी खोई ।

मैं रजनी की शून्य पहेली,
मै वियोग की आग अकेली,
मैं पिँजरे में बन्द कबूतर,
मैं मरने जीने का अन्तर,

मेरी आँखे बरस रही हैं, सारी रात ज़िन्दगी रोई ।
मेरी नींद कहाँ जा सोई, बोलो तारों ! बोलो कोई ॥

मेरे श्वासो की गति रुकती,
तड़प रहा मन, छाती फुकती,
रात नहीं काटे से कटती,
वाणी नाम उसी का रटती,

जिसकी स्मृति में तड़प रहा मैं, जिसके लिये लेखनी रोई ।
मेरी नींद कहाँ जा सोई, बोलो तारों ! बोलो कोई ॥

तेरी याद

[६५]

तेरी याद तभी आती है ।

जब मानवता लज्जित होकर, दर दर की ठोकर खाती है ।
जब चलते चलते थक जाता, मंज़िल हाथ नहीं आती है ॥
जब कन्धों पर मरघट जाती, लाश दिखाई दे जाती है ।
जब बीमारी में शैया पर, अच्छी बुरी याद आती है ॥
जब यह दुनिया ठुकराती है ।
तेरी याद तभी आती है ॥

चरणाश्रय

[६६]

बस इतना अधिकार चाहिये ।

गिरता पड़ता गिरूँ पगों में, ठुकराकर पग हटा न लेना ।
किसी तरह अपने चरणों की, धूलि मुझे मल लेने देना ॥
मेरे प्राण निकल उड जायें पड़ा हुआ हो पैरों में सर ।
तुम आगे बढ़ती जाओ मैं, मिट्टी उठा मलूँ मस्तक पर ॥

बस इतना सा प्यार चाहिये ।
बस इतना अधिकार चाहिये ॥

गीत न समझो

[६७]

ये अन्तर के चित्र इन्हें तुम, कवि के कल्पित गीत न समझो।
बार बार की हार इन्हें तुम, कवि की कोई जीत न समझो॥

इनमें वह तक़दीर बसी है,
जिसमें सत्य स्वतः रहता है।
इनमें वह तस्वीर बसी है,
जिसमें कवि गाता रहता है॥

इनमें अन्तरतम की प्रतिमा—
घूँघट में से बोल रही है।
इनमें मैं उत्तीर्ण, किन्तु वह—
मेरा हृदय टटोल रही है॥

इनमें अमर आज की वीणा, रूठा हुआ अतीत न समझो!
ये अन्तर के चित्र इन्हें तुम, कवि के कल्पित गीत न समझो॥

रुदन

[६८]

रजनी रो रो कर काटी है, दिन रो रो कर कट जायेगा।
रजनी फिर वापिस आयेगी, दिन भी फिर वापिस आयेगा॥

पर तुम आईं नहीं अभी तक,
मेरे प्राण निकल जायेंगे।
जब तक तुम आओगी तब तक,
ये सब मुझे निगल जायेंगे॥

पतझड़ होता लेकिन उस पर—
हरे हरे पत्ते भी आते।
कमल रात में मुरझाते हैं,
लेकिन फिर दिन में खिल जाते॥

ये सब लौट लौट आते पर— साथी लौट नहीं आयेगा।
रजनी रो रो कर काटी है, दिन रो रो कर कट जायेगा॥

लाचारी

[६९]

प्रियतम ! तुम नाराज़ न होना ।
लाचारी में मिल न सकूँ तो, चुप चुप छिप छिप कर मत रोना ॥

हम तुम तम में जलते दीपक,
हम काँटों में सुमन-सुस्तवक,
प्राण ! प्रणय-बलिदान देखलो,
विश्व-व्याध-व्यवधान देखलो,

प्रेमपन्थ बलिवेदी ही है, जल जल मेरे ताज ! न रोना ।
प्रियतम ! तुम नाराज़ न होना ।
लाचारी में मिल न सकूँ तो, चुप चुप छिप छिप कर मत रोना ॥

चोट

[७०]

अन्तर चीसा, चोटें चीसीं, सारी रात अकेला रोया।
दुनिया सोयी, कवि कब सोया ?

पैनी छुरियाँ चलीं हृदय पर,
पूर्ण चाँद था नील निलय पर,
इधर चकोर चला चुम्बन को,
उधर चाँद चल दिया भवन को,

वह कितना हतभागा जिसने, अक्षय धन पाकर भी खोया।
अन्तर चीसा, चोटें चीसीं, सारी रात अकेला रोया।
दुनिया सोयी, कवि कब सोया ?

[७१]

मेरी गति ! मेरी उपासने !

कुछ भी लिखूँ किन्तु पृष्ठों पर, बन जाये तस्वीर तुम्हारी।
प्रेम माँगता फिरूँ विश्व में, दर दर पर बन प्रेम-भिखारी॥
मेरी धड़कन मेरी कम्पन, बिछुवों की रुनझुन बन जाये।
प्यार बने सिन्दूर तुम्हारा, वाणी गीत तुम्हारे गाये॥

मेरी गति ! मेरी उपासने !

मेरे अश्रु तुम्हारे पथ में, दीपक बन बन कर जल जायें।
मेरे गीत लोरियाँ दे दे, बड़े प्यार से तुम्हें सुलायें॥
मेरे प्राण तुम्हारे पथ में, बन बन पायदान बिछ जायें।
मेरे श्वास तुम्हारे पथ में, मलयानिल सौरभ बरसाये॥

मेरी गति ! मेरी उपासने !

अग्नि बने अर्चना तुम्हारी, शीतल रक्त अर्घ्य बन जाये।
मेरा जीवन जले, तुम्हारी, आभा दमक दमक इठलाये॥
मेरी आशा तड़प तुम्हारे, सुख की अभिलाषा बन जाये।
मेरी कविता दुखी हृदय की, सच्ची परिभाषा बन जाये॥

मेरी गति ! मेरी उसासने !

दूर रहो

[७२]

देवी ! मुझ से दूर रहो तुम ।

मेरी छाया को यह दुनिया, अभिसारिका कहा करती है ।
मेरे दर्शन में दुनिया की, जलती दृष्टि रहा करती है ।
मेरा प्यार आग का गोला, अङ्गारे का साथ छोड़ दो ।
मेरे हाथों में काँटे हैं, लज्जे ! मेरा हाथ छोड़ दो ।
देवी ! मुझ से दूर रहो तुम ।

मेरे पास देख कर तुम को, जाने कोई क्या समझेगा ?
इस दुनिया में दुखी हृदय के, गाने कोई क्या समझेगा ?
दीप शलभ की दीप्त चिता पर, दीपित जग में दीप्त दिवाली ।
मिले मनों का कैसा हँसना ? कैसा जीना ? कहाँ उजाली ।
देवी ! मुझ से दूर रहो तुम ।

अस्पताल में

[७३]

'हाय ! हाय ! मर गया मर गया', कानों में यह ध्वनि आती थी।
अस्पताल में कोई देवी, मुझे पकड़कर ले जाती थी॥

कटे हाथ से गर्म रक्त की,
धार साथ बहती चलती थी।
यह क्या किया बताओ प्रियतम !
कोई यह कहती चलती थी॥

प्राण बच गये दुःख यही है,
आह खींच कर मैं यह बोला।
मेरे अन्तर में जलता है,
देवी ! विरह-अग्नि का गोला॥

"ग़ालिब" बोला बिना कफन के, लाश वियोगी की जाती थी।
'हाय ! हाय ! मर गया मर गया', कानों में यह ध्वनि आती थी॥

अस्पताल में

[७४]

पत्थर हृदय कर लिया मैंने, टाँके लगवाने को।
हँस कर हाथ कर दिया आगे, पट्टी बँधवाने को॥

कटी कलाई और कटी नस,
वह सीता जाता था।
धीरे धीरे हाथ किसी का,
माथा सहलाता था॥

प्राण खिंचे जाते थे पर मन—
साहस कर लेता था,
संजीवन सा हाथ किसी का—
जीवन भर देता था॥

तड़प रहा हूँ, तरस रहा हूँ, अन्तर सिलवाने को।
पत्थर हृदय कर लिया मैंने, टाँके लगवाने को॥

जग के डर से

[७५]

मुझे देखकर जग के डर से, जब तुमने अपना मुँह फेरा।
मुझ खड़ा रह गया हाय! कर, आँखों में छा गया अँधेरा॥

सब की घृणा सहन की लेकिन—
घृणा तुम्हारी सह न सकूँगा।
सच समझो अब और अधिक दिन,
मैं दुनिया में रह न सकूँगा॥

बार बार यह सोच रहा हूँ,
प्राणों की आहुति दे डालूँ।
हृदय जल चुका, देह जलाकर—
अब मैं अपनी राख उड़ालूँ।

पता नहीं अब कब विष खालूँ, अतः अभी अभिवादन मेरा।
मुझे देखकर जग के डर से, जब तुमने अपना मुँह फेरा॥

पहिचानो

[७६]

पहिचानो तुम तो पहिचानो तुम्हें प्यार कितना करता हूँ।
दिखलाने को, फुसलाने को, व्यर्थ नहीं आँखे भरता हूँ॥

प्रणय सान्त्वने! दग्ध हृदय यह,
तुम्हें देख कर भर आता है।
किन्तु तुम्हारी क्रुद्ध घृणा से,
भोला शिशु-मन डर जाता है॥

मैं शैतान नहीं हूँ, मैं तो—
तन, मन, धन से मान तुम्हारा।
मै न तुम्हें बर्बाद करूँगा,
दिव्ये! मै दिवि दान तुम्हारा॥

तुम क्या जानो श्वास श्वास में, इसी तरह आँखे भरता हूँ।
पहिचानो तुम तो पहिचानो, तुम्हें प्यार कितना करता हूँ॥

क्या कहती हो ?

[७७]

क्या कहती हो ? 'जाल डालकर', प्रिय ! तुमने बर्बाद कर दिया।
क्या कहती हो ? अब न मिलूँगी, मुझे मौत ने याद कर लिया ॥

पर मरघट में एक चिता में,
एक साथ दो लाश जलेंगी।
एक उधर से एक इधर से,
दो अर्थियाँ साथ निकलेंगी ॥

देवी ! दृढ़ विश्वास मुझे था,
तुम विश्वास नहीं छोड़ोगी।
कुछ भी सहना पड़े किन्तु तुम–
मेरा हृदय नहीं तोड़ोगी ॥

मरहम पट्टी लाईं थीं तुम, पर घावों में नमक भर दिया।
क्या कहती हो ? 'जाल डाल कर', प्रिय ! तुमने बर्बाद कर दिया ॥

मानवता

[७८]

वे भी तो मानव कहलाते–

जो धन पाकर अहंकार में, मानवता को बेच चुके हैं।
जो अंग्रेज़ों के चरणों में, दो टुकड़ों के लिये झुके हैं॥
पड़े मखमलों के गद्दों पर, इधर ब्याज में रक्त पी रहे।
कुछ पैसों में भाग्य बेचकर, उधर बिचारे श्रमिक जी रहे॥

जो अपनों पर तीर चलाते।
वे भी तो मानव कहलाते॥

साहस

[७९]

मेरी आँखें सावन भादो, मेरा अन्तस्तल बड़वानल ।
लेकिन सूर्य कह रहा कब से, जलता जलता आगे बढ़ चल ॥

ऐसे बढ़ जैसे 'प्रयाग' में–
"शेखर का पिस्तौल बढ़ा था।"
ऐसे चढ़ जैसे फाँसी पर–
"बिस्मिल हँसता हुआ चढ़ा था ॥"

ऐसे उठ जैसे "सुभाष" ने–
उठ कर सारा देश उठाया।
ऐसा दहका, "करो मरो" ने–
जैसा अङ्गारा दहकाया ॥

यही सूर्य की मूक प्रेरणा, यही चितायें कहतीं जल जल।
मेरी आँखें सावन भादो, मेरा अन्तस्तल बड़वानल ॥

[८०]

दिव्ये ! तुम में दृश्य प्रदर्शन,
तुम अदृश्य की मूर्त्ति कला हो।
बिजली-सी मुस्कान तुम्हारी,
तुम अपूर्ण की पूर्ति कला हो॥

चन्द्रमुखी ! चंचल चितवन में,
चित्रकार की चाहें चित्रित।
काले घुँघराले बालों में,
यौवन की अँगड़ाई अङ्कित॥

कमर-कुंज में बाल बाल पर—
लहरें तैर रहीं तारों-सी।
या कटि पर कच-घन का घूँघट,
या छवि छाई बौछारों सी॥

इधर उधर बिखरे पंखों सी—
माँग नाचते हुए मोर सी।
कितनों के मन चुरा रही है,
रूप ! तुम्हारी चाल चोर सी॥

चुम्बक चुम्बन से चिह्नों सी,
चिपट रहीं चिमटियाँ तुम्हारी।
इन्द्र धनुष के सात रँगों सी,
बड़ी बड़ी आँखें कजरारी॥

साहस

[७९]

मेरी आँखें सावन भादो, मेरा अन्तस्तल बड़वानल ।
लेकिन सूर्य कह रहा कब से, जलता जलता आगे बढ़ चल ॥

ऐसे बढ़ जैसे 'प्रयाग' में–
"शेखर का पिस्तौल बढ़ा था।"
ऐसे चढ़ जैसे फाँसी पर–
"बिस्मिल हँसता हुआ चढ़ा था ॥"

ऐसे उठ जैसे "सुभाष" ने–
उठ कर सारा देश उठाया ।
ऐसा दहका, "करो मरो" ने–
जैसा अङ्गारा दहकाया ॥

यही सूर्य की मूक प्रेरणा, यही चितायें कहतीं जल जल ।
मेरी आँखें सावन भादो, मेरा अन्तस्तल बड़वानल ॥

दिव्ये !

[८०]

दिव्ये ! तुम में दृश्य प्रदर्शन,
तुम अदृश्य की मूर्त्ति कला हो।
बिजली-सी मुस्कान तुम्हारी,
तुम अपूर्ण की पूर्ति कला हो॥

चन्द्रमुखी ! चंचल चितवन में,
चित्रकार की चाहें चित्रित।
काले घुँघराले बालों में,
यौवन की अँगड़ाई अङ्कित॥

कमर-कुंज में बाल बाल पर—
लहरे तैर रहीं तारों-सी।
या कटि पर कच-घन का घूँघट,
या छवि छाई बौछारों सी॥

इधर उधर बिखरे पंखो सी—
माँग नाचते हुए मोर सी।
कितनों के मन चुरा रही है,
रूप ! तुम्हारी चाल चोर सी॥

चुम्बक चुम्बन से चिह्नों सी,
चिपट रहीं चिमटियाँ तुम्हारी।
इन्द्र धनुष के सात रँगो सी,
बड़ी बड़ी आँखें कजरारी॥

प्रेरणा

सच कहता हूँ, हर कम्पन में-
दुखियों का सत्कार निहित है।
सच कहता हूँ, हर पग-ध्वनि में-
वीणा की झनकार निहित है॥
सच कहता हूँ, इन चरणों में-
मुक्ति और वरदान निहित है।
सच कहता हूँ, इस वाणी में-
युग युग का सम्मान निहित है॥

जड़ चेतन की साध छिपाये,
आँखों में रह रहीं अकेली।
खींच रहा तस्वीर, न खिँचती,
दिव्ये! तुम सौन्दर्य पहेली॥

जाने कितने तप थे जिन का,
तुम्हें दिव्य वरदान मिला यह।
जाने कितनी आशाओं से,
युग युग का सौन्दर्य खिला यह॥

'काशमीर' की कविता कहदूँ,
"पैरिस" का शृङ्गार कहूँ या।
साध कहूँ, या कहूँ तपस्या,
तरणी तट पतवार कहूँ या॥

जब दर्पण में देखी तुमने-
कर शृंगार रूप की झाँकी।
जिसने तुम्हें रचा उस विधि की-
सच कह दो क्या कीमत आँकी?

दिव्ये !

सच कहना उस कलाकार का–
मूल्य चुका भी पाओगी तुम।
सच कहना दर्पण में अपने,
नयन झुका भी पाओगी तुम॥

यदि लज्जा से झुक जायें दृग,
तुम बेहोश न हो जाना छवि !
वह सुन्दरता देख गर्व से–
इन्द्र धनुष सी "बल खाना" छवि !

दर्पण में धीरे धीरे जब–
सुन्दरता अँगड़ाई लेगी।
अङ्ग अङ्ग में बिजली जैसी,
कौंध तुम्हें दिखलाई देगी॥

इन्द्र-जाल सी सुन्दरता में–
निर्निमेष हो गई तूलिका।
प्रतिपल अङ्ग बदलते चलते,
कहो कहो क्या लिखूँ भूमिका ?

हार गया मैं लिख न सकूँगा,
अङ्ग अङ्ग की अँगड़ाई यह।
किसका तप खण्डन करने को,
विधि ने लीला फैलाई यह॥

जाने किसको इस छवि के हित,
कौन कौन बदनाम करेगा।
जाने कौन भिखारी बनकर,
प्राणों का बलिदान करेगा॥

प्रेरणा

जाने इसको पाकर किसका–
जन्म जन्म का पुण्य फलेगा।
जाने इसको खोकर किसका–
जन्म जन्म में हृदय जलेगा॥

किसी रोज़ सर धोकर दिव्ये!
दर्पण के आगे आ जाना।
ले नंगी तलवार हाथ में,
उससे अपनी दमक मिलाना॥

रजपूती नंगी कृपाण की–
कौंध तुम्हें दिखलाई देगी।
बढ़ चल बढ़ चल समर क्षेत्र में,
मस्ती तुम्हें बिदाई देगी॥

यौवन के उस आवाहन में,
सूर्य–ज्योति सी सुन्दरता हो।
जले गुलामी, मने दिवाली,
अग जग जगमग जग करता हो॥

तुम चाहो तो स्नेह–बिन्दु से,
बुझे हुए दीपक जल जायें।
तुम चाहो तो चपल दृष्टि से,
जल जल पाप पुण्य फल जायें॥

देवि! बतादो मुझे मुक्ति–पथ,
भूल गया मैं चलते चलते।
जलता जलता ढलता चल कवि!
सूर्य कह गया ढलते ढलते॥